Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गवत-खण्डनम्

1.2
V

स्वामी दयानन्द सरस्वती

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रामलाल कपूर ट्रस्ट का संक्षिप्त परिचय

स्थापना—२६ फरवरी १९२८ को माननीय श्री रामलाल जी कपूर (अमृतसर) के स्वर्गवास के पश्चात् उनके सुपुत्रों सर्व श्री **रूपलाल जी कपूर, हंसराज जी कपूर, ज्ञानचन्द जी कपूर,** तथा **प्यारेलाल जी कपूर** ने अपने स्वर्गीय पिता जी की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिये यह धर्मार्थ ट्रस्ट स्वर्गीय श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु के सहयोग से स्थापित किया।

ट्रस्ट के उद्देश्य—प्राचीन वैदिक साहित्य का अन्वेषण, रक्षा तथा प्रचार, एवं भारतीय संस्कृति, भारतीय शिक्षा, भारतीय विज्ञान और चिकित्सा द्वारा जनता की सेवा।

ट्रस्ट के प्रधान और मन्त्री—प्रथम प्रधान स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी रहे। उनके बाद स्व० श्री पं० ब्रह्मदत जिज्ञासु, स्व० श्री पं० भगवद्दत जी रिसर्चस्कालर, स्व० श्री वैद्य रामगोपाल जी शास्त्री रहे। अब श्री पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक प्रधान हैं। आद्य मन्त्री स्व० श्री रूपलाल जी कपूर थे। उनके पश्चात् स्व० श्री बा० हंसराज जी कपूर रहे। अब श्री बा० प्यारेलाल जी कपूर हैं।

ट्रस्ट का कार्य—ट्रस्ट की ओर से इस समय निम्न कार्य हो रहे हैं—

१. वैदिक वाङ्मय का अनुसन्धान वा प्रकाशन।

२. पाणिनि-महाविद्यालय (आर्षपाठ-विधि के अनुसार)।

३. बृहत् पुस्तकालय—वेद और व्याकरणादि विषयों में शोध-कार्य के लिये उपयोगी अत्यन्त दुर्लभ मुद्रित तथा हस्तलिखित ग्रन्थों का संग्रह।

४. वेदवाणी (मासिक-पत्रिका) का प्रकाशन।

५. प्रेस—सब प्रकार के वैदिक सस्वर ग्रन्थ छापने योग्य।

अनुसंधान व प्रकाशन कार्य के रूप में ट्रस्ट की ओर से अब तक वेद, कर्मकाण्ड, अध्यात्म, व्याकरण, निरुक्त, इतिहास, राजनीति आदि विविध विषयों के लगभग ९० ग्रन्थ छप चुके हैं। ट्रस्ट ने ऋषि दयानन्द सरस्वती कृत ग्रन्थों के भी शुद्ध सुन्दर शोधपूर्ण विशिष्ट संस्करण प्रकाशित किये हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

आ. पु.

ओ३म्

भागवत-खण्डनम्

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यदयानन्दसरस्वतीस्वामिनिर्मितम्

श्रीपण्डितयुधिष्ठिरमीमांसकविहिताऽऽर्यभाषानुवादसहितम्

तिथी......
पु०सं० 1325

प्रकाशक—

मन्त्री—रामलाल कपूर ट्रस्ट

बहालगढ़ (सोनीपत-हरयाणा)

मुद्रक—

शान्ति स्वरूप कपूर

रामलाल कपूर ट्रस्ट प्रेस, बहालगढ़

(सोनीपत-हरयाणा)

तृतीयवार] मार्गशीर्ष सं० २०४० [मूल्य ०-००

५/-

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

स म र्प ण

जिन्होंने ऋषि दयानन्द सरस्वती के शतशः पत्रों के

अनुसन्धान में वर्षों अथक परिश्रम किया,

और अकथनीय कष्टों को सहा,

जिनके हृदय में ऋषि के कार्य को आगे बढ़ाने की

कभी न बुझने वाली प्रचण्ड ज्वाला

सदा धधकती रहती थी,

जो ऋषि कार्य के लिये मुझे

बराबर सत्प्रेरणाएं

देते रहते थे,

उन्हीं परम ऋषि-भक्त

स्वर्गीय श्री मामराजसिंहजी की

पवित्र स्मृति में

सादर समर्पित

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

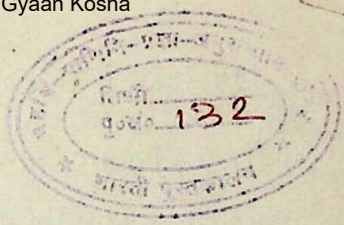

प्राक्कथन

श्री दयानन्द सरस्वती ने गुरुवर श्री दण्डी विरजानन्द सरस्वती से लगभग तीन वर्ष (सं० १९१७-१९२०) पर्यन्त अष्टाध्यायी महाभाष्य आदि आर्षग्रन्थों का अध्ययन करके सं० १९२० वैशाख मास में आगरा में पदार्पण किया। आगरा में लगभग दो वर्ष (१९२०-१९२१) पर्यन्त स्थिति की। इस काल में ऋषि दयानन्द ने दो लघु ग्रन्थ लिखे। एक सन्ध्या और दूसरा —भागवतखण्डन। सन्ध्या की पुस्तक सं० १९२० के अन्त में छपवाई और भागवतखण्डन संभवतः सं० १९२१ के उत्तरार्ध में लिखी।

श्रीमद् भागवत वैष्णव सम्प्रदाय का प्रधान ग्रन्थ है। अतः इसका दूसरा नाम **'वैष्णवमतखण्डन'** भी है। श्री पं० लेखराम जी ने ऋषि के जीवनचरित में इसका उल्लेख **भड़वा भागवत** और **पाखण्डखण्डन** नाम से किया है। पं० लेखरामजी द्वारा सङ्कलित जीवनचरित पृष्ठ ७९० (प्रथम-संस्करण) पर इस पुस्तक के विषय में निम्न परिचय उपलब्ध होता है—

"पाखण्ड-खण्डन—यह पुस्तक सात पृष्ठ की संस्कृत-भाषा में स्वामीजी ने भागवत-खण्डन विषय पर लिखी है। सं० १९२१ व १९२२ जब वह दूसरी बार आगरा में रहे, उसी समय का मालूम होता है। सब से पुरानी हस्तलिखित कापी इसकी ज्येष्ठ द्वितीय तिथि ९ बृहस्पतिवार सं० १९२३ तदनुसार ७ जून १८६६ में लिखी हुई पं० छगनलालजी शास्त्री किशनगढ़ के पास विद्यमान है। अजमेर से लौट कर सं० १९२३ के अन्त में आगरा आके ज्वालाप्रकाश प्रेस में ज्वालाप्रसाद भार्गव[1] के प्रबन्ध से इसकी कई हजार कापियां छपवायीं, और प्रथम वैशाख[2] सं० १९२४ तदनुसार १२ अप्रेल सन् १८६७ में मेला हरिद्वार पर इसे विना मूल्य वितीर्ण किया। यह बहुत सुन्दर समयोचित ट्रैक्ट उत्तम संस्कृत भाषा में है। यह दूसरी बार नहीं छपा।"

---

१. इसी ज्वालाप्रसाद भार्गव ने सं० १९४० (सन् १८८३) में वेदभाष्य भी छापना आरम्भ किया था। देखो—म० मुंशीराम सम्पादित पत्रव्यवहार पृ० १९२। यह किसका रचा हुआ था, यह पत्र से विदित नहीं होता।

२. अर्थात् सौर वर्ष के वैशाख मास की प्रथम तिथि (वैशाखी)।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इस उद्धरण में सं० १९२१ व १९२२ में दूसरी बार आगरा आने का उल्लेख है, यह हमारी समझ में अशुद्ध है। क्योंकि स्वामी जी महाराज का आगरा में द्वितीय बार आगमन सं० १९२३ के उत्तरार्ध में हुआ था।

श्री पं० छगनलालजी शास्त्री की प्रति पर जो लेखन काल लिखा है, उस समय ऋषि दयानन्द राजस्थान के अजमेर आदि नगरों में भ्रमण कर रहे थे। हमारे विचार में पं० छगनलालजी की प्रति पर जो लेखन काल लिखा था, वह ऋषि दयानन्द की हस्तलिखित प्रति से प्रतिलिपि करने का काल है; न कि मूल ग्रन्थ के लिखे जाने का। पुस्तक लिखे जाने का वास्तविक काल अज्ञात है।

अजमेर (सं० १९२३) के वर्णन में बाबू देवेन्द्रनाथ संकलित जीवन-चरित में लिखा है—'ब्राह्मणों ने कहा कि आप भागवत का खण्डन करते हैं। उसकी अशुद्धियां लिखकर दीजिए। स्वामी जी ने तीन-चार पत्रों पर उसकी अशुद्धियां संस्कृत में लिखकर दी थीं। भाग १, पृष्ठ ९३ द्वि० सं०।

सम्भव है यह पत्रे प्रस्तुत 'भागवत-खण्डन' के ही रहे होंगे; अथवा उसके प्रारूप के होंगे। छगनलाल शास्त्री के पास वर्तमान पुस्तक पर अङ्कित तिथि से भी इसकी पुष्टि होती है। यदि हमारा अनुमान ठीक हो, तो इस पुस्तक की रचना का श्रेय अजमेर नगर को ही है। और इसकी रचना काल वही है, जो छगनलाल शास्त्री की पुस्तक पर अङ्कित है।

यह पुस्तक १८×२२ अठपेजी आकार के ७ पृष्ठों में छपी थी। इसकी एक प्रति ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त और उनके शतशः पत्रों के अन्वेषक श्री **मामराजसिंहजी** खतौली (मुजफ्फर नगर) निवासी फर्रुखाबाद में बड़े परिश्रम से ढूंढ कर लाए थे। उन्होंने यह प्रति ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन के संग्राहक और सम्पादक श्री पं० भगवद्दत्तजी को दी थी। यह प्रति विगत देशविभाजन काल (सं० २००४) में उनके अद्भुत संग्रह के साथ ही उनके गृह माडल टाउन लाहौर में रह गई। इस पुस्तक के आद्यन्त के पाठों का निर्देश श्री पं० भगवद्दत्तजी ने '**ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन**' ग्रन्थ की भूमिका में किया है। हमारे ज्ञान में अब यह पुस्तक कहीं पर भी विद्यमान नहीं है। यही दशा ऋषि दयानन्द के दो ग्रन्थ आद्य सन्ध्या तथा **अद्वैतमतखण्डन** की है। मैं इन तीनों ग्रन्थों की उपलब्धि के लिए १०,१२ वर्ष से प्रयत्नशील रहा हूं, परन्तु इनकी उपलब्धि में अकृतकार्य रहा।

संवत २०१८ वैशाख मास में अपने 'संस्कृत व्याकरण शास्त्र का

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इतिहास' ग्रन्थ के द्वितीय भाग के मुद्रण की व्यवस्था के लिए मेरा काशी जाना हुआ। मैं वहां एक दिन 'रामलाल कपूर निक्षेपनिधि' के पुस्तकालय को पुरानी पुस्तकें टटोल रहा था। उसी समय दैवात् एक पुस्तक के प्रथम पृष्ठ पर दृष्टि गई, उसका नाम है—"पाषंडि मुखमर्दन"। यह पुस्तक इन्द्रप्रस्थ निवासी श्री विश्वेश्वरनाथ गोस्वामी नाम के किसी पण्डित की लिखी और मुरादाबाद के सुदर्शन यन्त्रालय में लीथो की छपी हुई है। इसमें २०×२६ अठपेजी आकार के ६२ पृष्ठ हैं। इस पर मुद्रण अथवा लेखन काल का निर्देश नहीं है। इस पुस्तक के लेखक ने ऋषि दयानन्द विरचित 'भागवत-खण्डन' को अक्षरशः उद्धृत करके उसका खण्डन किया है। इसलिए इस पुस्तक में सम्पूर्ण 'भागवत-खण्डन' पुस्तक सुरक्षित उपलब्ध हो गई। उसी में से निकाल कर 'भागवत-खण्डन' को पृथक् प्रकाशित कर रहा हूं। मूल पुस्तक संस्कृत-भाषा में है। संस्कृत-भाषा से अनभिज्ञ पाठकों के लिए मैं उसका भाषानुवाद भी साथ में दे रहा हूं।

एक बात विशेष ध्यान में रखने योग्य है। इस पुस्तक में केवल कृष्ण भागवत पुराण का ही खण्डन है। उस समय तक ऋषि दयानन्द शेष पुराणों को परम्परानुसार प्रामाणिक मानते थे। इस पुस्तक का महत्त्व केवल दो विषयों के लिए है—एक तो इससे यह स्पष्ट होता है कि ऋषि दयानन्द इस समय तक मूर्तिपूजा का खण्डन करने लग गए थे। और दूसरा है ऋषि की उपलब्ध कृतियों में इसका सबसे प्रथम कृति होना।

इस पुस्तक की रचना के कुछ काल पश्चात् ही संभवतः ऋषि दयानन्द को यह अनुभव हो गया कि मूर्तिपूजा का आश्रय वर्तमान पुराण ही हैं। अतः उन्हें सभी पुराणों का पूर्णतया परित्याग और खण्डन करना पड़ा। सं० १९२६ आषाढ़ मास में ऋषि दयानन्द ने कानपुर में एक प्रामाणिक पुस्तकों की सूची संस्कृत में छपवाई थी (देखो ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन, पृष्ठ १)। इस सूची में किसी भी पुराण का नाम उल्लिखित नहीं है। इतना ही नहीं, 'मनुष्यकृताः सर्वे ब्रह्मवैवर्तपुराणादयो ग्रन्थाः प्रथमं गप्पम्' पंक्ति द्वारा समस्त पुराणों को त्याज्य कहा है। इस सूची से इतना स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द सं० १९२६ से पूर्व ही वर्तमान पराणों को वेद-विरुद्ध मानने लग गए थे, और उनके खण्डन में प्रवृत्त हो गए थे।

इस पुस्तिका में कृष्ण भागवत के जिन अंशों का खण्डन ऋषि दयानन्द ने किया है, उनमें से कतिपय अंशों का खण्डन 'सत्यार्थप्रकाश' के

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

(प्रथम और द्वितीय दोनों संस्करणों के) ११ वें समुल्लास में भी मिलता है। 'सत्यार्थ-प्रकाश' के दोनों संस्करणों के उन अंशों के साथ तुलना के लिए हम उन्हें परिशिष्ट में दे रहे हैं।

इस दुर्लभ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पुस्तिका की उपलब्धि से पूर्व ही ऋषि दयानन्द के अनन्य भक्त श्री माननीय मामराज सिंह जी का स्वर्गवास हो गया। यदि यह पुस्तिका उनके जीवनकाल में ही उपलब्ध हो जाती, तो उन्हें अपने द्वारा बड़े प्रयत्न से ढूंढी गई और दुर्दैव से नष्ट हुई अनुपम निधि को पुनः प्राप्त करके जितनी प्रसन्नता होती, उसकी कल्पना वह व्यक्ति कर सकता है, जिसका उनके साथ गहरा सहवास रहा हो।

मुझे ऋषि दयानन्द के लुप्त हुए इस ग्रन्थ का उद्धार करने की महती प्रसन्नता है। यदि इसी प्रकार ऋषि की लुप्त हुई आद्य 'सन्ध्या' और 'अद्वैत-मत-खण्डन' दोनों पुस्तिकाएं भी उपलब्ध हो जाएं, तो बड़े सौभाग्य का विषय होगा।

इस पुस्तक के सम्पादन में मुझे श्री पं० रमाशंकर भट्टाचार्य व्याकरणाचार्य, एम० ए० से पर्याप्त सहायता मिली है। इसके लिए मैं उनका आभारी हूं।

भारतीय-प्राच्यविद्या-प्रतिष्ठान
२४।२१२ रामगंज, अजमेर

विदुषां वशंवदः—
युधिष्ठिर मीमांसक

द्वितीय संस्करण

इस पुस्तक का प्रथम संस्करण २००० दो सहस्र छपा था। वह कुछ ही समय में समाप्त हो गया। चिरकाल से इस की बराबर मांग हो रही थी। इस कारण इस का द्वितीय संस्करण रामलाल कपूर ट्रस्ट की ओर से प्रकाशित किया जा रहा है।

व्यास पूर्णिमा
सं० २०२८

युधिष्ठिर मीमांसक

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

भागवत-खण्डनम्

श्रीमद्भागवतं पुराणं नाम किमस्ति ? कुतः सन्देहः ? द्वे भागवते श्रूयेते—एकं देवीभागवतं द्वितीयं कृष्णभागवतं चेति । अतो जायते सन्देहः, अनयोः किमस्ति व्यासकृतमिति ? देवीभागवतं श्रीमद्भागवतमस्ति व्यासकृतं च, नान्यत् । कुत एतत् ? शुद्धत्वाद् वेदादिभ्योऽविरुद्धत्वाच्च । अत एव देवीभागवतस्य श्रीमद्भागवतसंज्ञा, नान्यस्य च भागवतस्य । कुत एतत्? अशुद्धत्वात् प्रमत्तगीतत्वाच्च ।

किञ्च तत्—

"जन्माद्यस्य यतोऽन्वयाद् इतरश्चार्थेष्वभिज्ञः स्वराट्"[1] ।

इत्यादि निर्मितं यत् । कुत एतद्रुद्धम् ? वेदादिभ्यो विरोधात् । कोऽस्ति विरोधः ? सर्वमेव विरुद्धम् । कथम् ?

भाषार्थः

श्रीमद्भागवत नाम का पुराण कौन-सा है ? यह सन्देह क्यों हुआ ? दो भागवत नाम के पुराण सुनाई देते हैं (उपलब्ध होते हैं)—एक देवीभागवत और दूसरा कृष्णभागवत । इसलिए सन्देह होता है कि इनमें कौन-सा व्यासकृत है[2] ? देवीभागवत ही श्रीमद्भागवत है, और वही व्यासकृत है, अन्य नहीं । यह क्यों ? शुद्ध होने से और वेदादि से अविरुद्ध होने से । इसीलिए देवीभागवत की ही श्रीमद्भागवत संज्ञा है, अन्य भागवत की नहीं । यह क्यों ? अशुद्ध होने से, और प्रमत्तगीत (=प्रमादी पुरुष का कहा) होने से ।

वह (=अशुद्ध और प्रमत्तगीत) क्या है ? जन्माद्यस्य०—इत्यादि निर्मित जो [कुछ है, वह सभी अशुद्ध] है । यह अशुद्ध क्यों है ? वेदादि से विरोध होने के कारण । कौन-सा विरोध है ? सब कुछ ही विरुद्ध है ।

---

१. भागवत स्कन्ध १, अध्याय १, श्लोक १ । अग्रे सर्वत्र संख्यानिर्देश एव करिष्यते । तत्र यथाक्रमं स्कन्धाध्यायश्लोकसंख्या विज्ञेया ।

२. पुराणों की संख्या अठारह मानी जाती है दोनों भागवतों की गणना करने

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

"न नानार्थं न भिन्नार्थं नासंहृतं न चाधिकम् ।
न न्यूनं कष्टशब्दं च व्युत्क्रमाभिहितं न च ॥
नासत्यगतिसत्यं वा सूक्ष्मं सत्यप्रयोजनम् ।
एतद् दशदोषरहितं वाक्यमुच्चार्यं लेखनीयं च" ॥[1]

इत्युक्तं मार्कण्डेयपुराणे[2] । एतद्दोषवदस्ति प्रमत्तगीतं भागवतम्, अतोऽकथनीयमश्रवणीयं च ।

कथं तर्हि शुक उक्तवान् इदं भागवतं परीक्षितं प्रति[3] इति ? नोक्त-

---

कैसे ? 'अनेक अर्थों वाला, भिन्न अर्थ वाला, संक्षिप्त, अधिक, न्यून, क्लिष्ट शब्द, उलटे क्रम से कथित, असत्य, अतिसत्य, सूक्ष्म सत्य प्रयोजन वाला, इन दश दोषों से रहित वाक्य ही उच्चारण करना और लिखना चाहिए' ऐसा मार्कण्डेय पुराण में कहा है । इन दोषों से युक्त है, प्रमादी पुरुष का कहा हुआ भागवत । इसलिए यह कथा करने और सुनने योग्य नहीं है ।

[यदि इन दोषों से युक्त भावगत है] तो कैसे 'शुक (=व्यासपुत्र) ने इस भागवत को परीक्षित के प्रति कहा' ऐसा कहा जाता है ?

पर १९ पुराण-संख्या हो जाती है । इसलिए गणना में एक ही भागवत का समावेश हो सकता है । चाहे वह देवीभागवत हो, चाहे कृष्ण-भागवत ।

१, तुलना कार्या—महाभारत शान्ति० ३२० । ८७-८९—अभिन्नार्थम्, न चाधिकम्, नाश्लक्ष्णम्, न संन्दिग्धम्, न गुर्वक्षरसंयुक्तम् न पराङ्मुखसुखम्, नानृतम्, न त्रिवर्गेण विरुद्धम्, नाप्यसंस्कृतम्, न न्यूनम्, न कष्टशब्दम्, न विक्रमाभिहितम्, न शेषम्, न अनुकल्पेन युक्तम्, न निष्कारणम्, न अहेतुकम् ।

२. अत्र मार्कण्डेयपुराण नाम्नोद्धृतौ दशदोषनिदर्शकौ श्लोकौ मार्कण्डेयपुराणे नोपलब्धावस्माभिः । मार्कण्डेयपुराणे (१।१८)—'मार्कण्डेय·····दशाष्टदोषरहितो वक्तुम्, निर्देश उपलभ्यते । स्कन्दपुराणे कुमारिकाखण्डे पञ्चचत्वारिंशत्तमेऽध्याये (वाङ्संस्करणे) 'नवभिर्नवभिश्चैव विमुक्तं वाग्विदूषणैः । नवभिर्बुद्धिदोषैश्च वाक्यं वक्ष्याम्यदोषमत् ॥, इत्युक्त्वा अष्टादशवाक्यदोषा नवबुद्धिदोषाश्च विवृताः । अस्मिन्नेव पुराणे प्रभासखण्डे "दशदोषविवर्जितां कथाम्" इति वाक्यं दृश्यते, परन्तु दशवाक्यदोषास्तत्र नोपसंख्यायन्ते ।

३. द्र० भागवत १।३।४१ ४२; तथा भागवत-माहात्म्य अ० १, श्लोक ११ १३ ॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वान्। कुतो नोक्तवान्? शुकस्तु युद्धात् पुरा मोक्षं प्राप्तवान् इति महाभारते शान्तिपर्वणि लिखितम्[1]। अतोऽशुद्धमेव—'शुकः परीक्षितं प्रत्युक्तवान्' इति। तर्हि छायाशुकेन प्रोक्तमिति? स तु गृहस्थो न नग्नः[2]। व्यासप्रोक्तमस्ति न वा[3], नैवाम्बरीषशुकप्रोक्तम्[4]।

"नित्यं भागवतं श्रृणु हयग्रीव शुकप्रोक्तम्"।[5]

'नित्यं भागवतं श्रृणु' इति सर्वं[6] कथनमशुद्धमेव।

[शुक ने परीक्षित के लिए] नहीं कहा। क्यों नहीं कहा? शुक तो [भारत] युद्ध से पूर्व ही मोक्ष को प्राप्त हो गया था, ऐसा महाभारत के शान्तिपर्व में लिखा है। इसलिए अशुद्ध ही है कि—'शुक ने परीक्षित के लिए [भागवत] कहा'। तो छायाशुक ने कहा [होगा]? वह तो गृहस्थ था, संन्यासी नहीं। व्यास प्रोक्त है नहीं, नहीं अम्बरीषशुक का कहा है।

नित्यं भागवतं श्रृणु०—इत्यादि श्लोक में 'नित्य भागवत को सुनो' कहना सारा ही अशुद्ध है[7]।

---

१. अध्याय ३३३ ॥ शान्तिपर्वणि शुकस्य मोक्षप्राप्तिकथा निरुक्ता। शान्तिपर्वस्था सर्वा एव कथा भारतयुद्धानन्तरं युधिष्ठिरं प्रत्युक्ताः। अतो भारतयुद्धात् प्रागेव शुको मोक्षं प्राप्तवानिति स्पष्टमेव।

२. संन्यासीत्यर्थः। ३. अस्थानेऽयं पाठः प्रतिभाति।

४. भागवतटीकारम्भे श्रीधरेणोक्तम्—'पद्मपुराणे च अम्बरीषं प्रति पुराणवचनत्—अम्बरीष शुकप्रोक्तं नित्यं भागवतं श्रृणु' इति। मुद्रिते पद्मपुराणे गौतमाम्बरीषसंवादो नोपलभ्यते तत्त्वसन्दर्भे श्रीजीवगोस्वामिनाऽयं श्लोक उद्धृतः।

५. नोपलब्धमस्माभिः।

६. दूषितस्य भागवतस्य नित्यं श्रवणं कार्यमित्येकम्, हयग्रीवशुकप्रोक्तं शुकप्रोक्तं वा इत्यपरम्। उभे अपि वचने अशुद्धे इति तात्पर्यम्।

७. इस श्लोक में 'भागवत को नित्य सुनो' यह लिखना उसके अशुद्ध होने से ठीक नहीं है। और 'हयग्रीव शुक से अथवा शुक से कहा गया' कथन भी इतिहासविरुद्ध होने से अशुद्ध है। इन दो अशुद्धियों की दृष्टि से 'सर्वम्' (सारा) पद का निर्देश किया है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

अन्येऽपि दोषाः सन्ति न वा ? सन्ति बहवो दोषाः। एकदोषवतोऽपि ग्रन्थस्य प्रामाण्यं न भवति, कुतो बहुदोषवतश्च। तस्मात् स्थालीपोलाकन्यायवत् [1]प्रमादस्तावद् द्रष्टव्यः—

"ज्ञानं परमं गुह्यं मे यद् विज्ञानसमन्वितम्।
सरहस्य तदङ्गं च गृहाण गदितं मया" ॥[2]

परमं गुह्यं यदस्ति ज्ञानं तद्विज्ञानमेव भवति, पुनर्विज्ञानसमन्वितमितीदं [विशेषणं] व्यर्थमेव। एवं च [3]चतुश्श्लोक्यशुद्धाऽस्ति।

"जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादि०"[4]।

यतः कुत इति प्रष्टव्यः ? कर्मणो वा कालाद्, आहोस्विद ईश्वराद् वा कामाद् आहोस्वित्प्रकृतेर्वा ब्रह्मणः। किञ्चिदपि पूर्वं प्रकृतं न दृश्यते। अत एव सर्वमशुद्धं कथनम्।

अन्य भी दोष हैं वा नहीं ? बहुत से दोष हैं। एक दोष से युक्त ग्रन्थ का भी प्रामाण्य नहीं होता, बहुत दोष वाले का कहां से होगा ? इसलिए स्थालीपुलाक न्याय से [कतिपय] प्रमाद देखने योग्य हैं—

ज्ञानं परमं गुह्यं मे यद्विज्ञानसमन्वितम्०—यहां जो परम गुह्य ज्ञान होता है, वह विज्ञान ही होता है। अतः पुनः 'विज्ञानसमन्वितम्' (=विज्ञान से युक्त) यह कथन व्यर्थ है। इसी प्रकार चतुःश्लोकी (=चारों श्लोक) अशुद्ध हैं।

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयात्०—यहां 'यतः' (=जिससे) पद का अभिप्राय प्रष्टव्य है—कर्म से अथवा काल से, अथवा ईश्वर से वा काम से, अथवा प्रकृति से वा ब्रह्मा से ? इस से पूर्व कुछ भी प्रकृत (=प्रकरण निर्दिष्ट) नहीं है। इसलिए यह सब कथन अशुद्ध है।[5]

---

१. 'प्रसादः' इति पूर्वमुद्रितोऽपपाठः।

२. भाग० २।९।३०॥ ३. भाग० २।९।३१-३४॥

४. भाग० १।१।१॥

५. सर्वनाम-संज्ञक पद का निर्देश पूर्व-निर्दिष्ट पद के स्थान पर ही होता है। यहां इस श्लोक से पूर्व कुछ भी प्रकृत नहीं है। अतः 'यतः' सर्वनामपद का प्रयोग अशुद्ध है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

"भिक्षुभिर्विप्रवसिते विज्ञानादेष्टृभिस्तव" ।[1]

वसिस्सम्प्रसारणी **इति महाभाष्यम्**[2] । संवत्सरोषितो भिक्षुः[3]; प्राप्य पुण्य-कृतांल्लोकान् उषित्वा शाश्वतीः समाः[4] **इत्युदाहरणाद् 'विप्रसित' इत्यशुद्धमेव** ।

"कथितो वंशविस्तारो भवता सोमसूर्ययोः" ।[5]

प्रथने वावशब्दे[6] [इति] **शब्दोपाधौ विस्तरः, अन्यत्र विस्तार एव । कोऽस्ति शब्दोपाधिः ? कथनश्रवणे** । विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन, भूयः कथय[7]; विभूतेर्विस्तरो मया[8]; नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे[9]; दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ मे शृणु[10]; निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद् गदतो मम[11]। **एवं सति 'कथितो वंशविस्तारो भवता' इत्यशुद्धमेव** ।

भिक्षुभिर्विप्रवसिते—'वस' [निवासे] धातु सम्प्रसारण कार्य वाली है, ऐसा महाभाष्य में कहा है। **संवत्सरोषितः०; प्राप्य ·····उषित्वा०** आदि उदाहरणों [में 'उषित' पद का प्रयोग होने] से 'विप्रवसितः' पद अशुद्ध ही है ['विप्रोषितः' प्रयोग होना चाहिए] ।

कथितो वंशविस्तारो० प्रथने वावशब्दे इस [पाणिनीय नियम से] शब्द अभिधय होने पर "**विस्तर**", और अन्यत्र "**विस्तार**" [शब्द ही साधु होता है] । यहां कौनसी शब्दोपाधि है ? कथन और श्रवण [यहां सोमसूर्यवंश का कथन और श्रवण इष्ट है, अतः विस्तार शब्द का प्रयोग अशुद्ध है] । **विस्तरेणात्मनो०; विभूतेर्विस्तरो मया; नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे; दैवो विस्तरशः प्रोक्त०; निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद्०** [आदि गीता के श्लोकों में "**विस्तर**" शब्द ही प्रयुक्त हुआ है, इसलिए] ऐसा प्रयोग होने से **'कथितो वंशविस्तारो०'** [में "**विस्तार**" शब्द का प्रयोग] अशुद्ध ही है ।

---

१. भाग० १।६।५ ।। ममेति पाठः ।
२. 'वसिः प्रसारिणी' इति महाभाष्ये (७।२।१०) पाठः ।
३. अनुपलब्धमूलम् ।
४. गीता ६।४१ ।।
५. भाग० १०।१।१।।
६. अष्टा० ३।३।३३।।
७. गीता १०।१८।।
८. गीता १०।४०।।
९. गीता १०।१९।।
१०. गीता १६।६।।
११. अनुपलब्धमूलमिदम् ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

"निगमकल्पतरोर्गलितम्"[1] इत्यादि ।

अत्र वेदनिन्दा कृता हि । पतितम्, इति वक्तव्ये 'गलितम्' इत्यशुद्धम्[2] । एका षष्ठी, द्वे पञ्चम्यौ वाऽत्राशुद्धमेव[3] । 'शृणुत' इति वक्तव्ये 'पिवत' इत्यप्यशुद्धमेव ।[4]

"नेमं विरञ्चिर्न भवो न श्रीरप्यङ्गसंश्रया ।
प्रसादं लेभिरे गोपी यत्तत् प्राप मुक्तिदात्" ॥[5]

निगमकल्पतरो०—इस श्लोक में वेद की निन्दा की है[6] । पतितम् (=गिरा हुआ) ऐसा कहने के स्थान में गलितम् (=गला हुआ) कहना अशुद्ध है[7] । एक षष्ठी [=निगमकल्पतरोः में] अथवा दो पञ्चमी [=निगमकल्पतरोः' शुकमुखात्] का प्रयोग अशुद्ध है[8] । 'शृणुत' (=सुनो) ऐसा कहने के स्थान में 'पिबत' (=पीओ) का प्रयोग भी अशुद्ध है[9] ।

---

१. भाग० १।१।३॥

२. तरोः फलं पतति, न तु गलति । अतः 'पतितं फलम्' इत्येव वाच्यम् ।

३. एका षष्ठी—निगमकल्पतरोः । द्वे पञ्चम्यौ वा, एका—(पक्षान्तरे) निगमकल्पतरोः, द्वितीया—शुकमुखात् । षष्ठीपञ्चम्योरुभयोर्वा पञ्चम्योः परस्परमन्वयाभावाद् अशुद्धत्वं ज्ञेयम् ।

४. अस्मिन्नेव श्लोके (भाग० १।१।३) उत्तरार्धे 'पिबत' इत्यस्य स्थाने 'शृणुत' इति वक्तव्यम्, भागवतग्रन्थस्य शब्दात्मकत्वात् । नहि शब्दात्मकं केनचित् पातुं शक्यते ।

५. भाग० १०।९।२० ॥ भागवते 'नेमं विरञ्चो न भवो' इति पाठः ।

६. इस श्लोक में भागवत को वेदरूपी वृक्ष का फल=सार कहा है। अर्थात् वेद से भागवत की श्रेष्ठता कही है ।

७. फल के वृक्ष से पृथक् होने में 'गिरना' क्रिया का प्रयोग होता है। अतः 'गलना' क्रिया का प्रयोग करना अनुचित है ।

८. 'निगमकल्पतरोः' में षष्ठी, तथा, शुकमुखात्' में पञ्चमी का परस्पर कोई अन्वय नहीं होता । यदि 'निगमकल्पतरोः' में पञ्चमी मानें, तब भी दोनों पञ्चमियों का परस्पर अन्वय नहीं बनता ।

९. भागवत ग्रन्थ शब्दरूप है । अतः उसके लिए 'सुनो' क्रिया का ही प्रयोग होना चाहिये, न कि 'पीओ' क्रिया का । क्योंकि वह जलवत् द्रव द्रव्य नहीं है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Gyaan Kosha

अत्रैकौ नकारो सार्थकः, द्वावनर्थकौ स्तः। निन्दा च कृता ब्रह्मादीनां देवक्यादीनां च।

विप्राद् द्विषड्गुणयुतादरविन्दनाभपादारविन्दमुखाच्छ्वपदं वरिष्ठम्।[1]

अत्र ब्राह्मणनिन्दा कृता। 'अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धय'[2] अस्माद् विरुद्धत्वाद् अशुद्धोऽपि[3]।

"क उत्तमश्लोकगुणानुवादात् पुमान् विरज्येत विना पशुघ्नात्।"[4]

अत्र वेदविहितकर्मकर्तृणां निन्दा कृता[5], अर्थाद् वेदानामपि। नास्तिको

नेमं विरञ्चिर्न०—इसमें एक नकार सार्थक हैं, और दो अनर्थक हैं।[6] तथा इस में ब्रह्मादि देवों और देवकी आदि की निन्दा की है।

विप्राद् द्विषड्गुणयुताद्०—इस में ब्राह्मणों की निन्दा की है।[7] तथा 'मूर्ख लोग मुझ अव्यक्त को व्यक्त (=प्रकट) हुआ मानते हैं,' इस [गीता के वचन से] विरुद्ध[8] होने से अशुद्ध भी है।

क उत्तमश्लोक०—इस श्लोक में वेदविहित कर्मों के करने वालों की

---

१. भाग० ७।९।१०॥ २. गीता ७।२४॥

३. गीतायां परब्रह्मणः शरीरग्रहणप्रतिषेध उक्तः। भागवतस्योक्तश्लोके नाभि-पादाद्यङ्गनिर्देशः कृतः ४. भाग १०।१।४॥

५. 'पशुघ्न' शब्दो याज्ञिकानां वाचकः, यथा 'गोघ्न' शब्दोऽतिथीनाम्। यथा गोघ्नपदे गवां हिंसा नाभिप्रेता, अपितु तत्प्राप्तिरेवाभिप्रेता। यद्वा—तद्धित-प्रयोगाभावेऽपि गोपदेन गोविकाराणां प्राप्तिरुच्यते। आगतायातिथये मधुपर्कं उपाह्रियते, मधुपर्कं च गव्यमेव भवति। एवमेव पशुघ्नशब्देनापि पशुप्राप्तिरेवोच्यते। नहि गवादिपश्वभावे किमपि यज्ञकर्म कर्तुं शक्यते, तत्र घृतदुग्धदधीनां प्रयोगविधानात्। अतः पशुघ्नानां याज्ञिकानां निन्दाविधानाद् अर्थापत्या वेदनिन्दाऽपि क्रियते।

६. इस श्लोक में निषेधार्थक तीन 'न' हैं। एक 'न' से ही निषेध अर्थ की प्रतीति हो जाने से अगले दो 'न' पदों का प्रयोग चिन्त्य है।

७. इस श्लोक में 'कमलनाभ (विष्णु) के पैर रूपी कमलों से विमुख अनेक गुणों वाले विप्र से चाण्डाल को श्रेष्ठ' कहा है। इस प्रकार अर्थापत्ति से ब्राह्मणों की निन्दा की है।

८. परमात्मा के अव्यक्त-स्वरूप होने से उसके पैर आदि की कल्पना नहीं हो सकती।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

वेदनिन्दकः[1] इत्युक्तं मनुना। अत एवायं भागवतस्यास्य कर्त्ता नास्तिकः।

"यद्वाग्विसर्गो जनताघविप्लवो यस्मिन् प्रतिश्लोकमबद्धवत्यपि"।[2]

असम्बद्धोऽयं श्लोकः।[3]

व्यासनारदसंवादे[4] व्यासस्यापि निन्दा कृता—व्यासः शोकातुरो-

निन्दा की है।[5] अर्थापत्ति से वेद की भी निन्दा है। 'वेदनिन्दक नास्तिक होता है', यह मनु ने कहा है। इसलिए यह इस भागवत का कर्ता नास्तिक है।

यद्वाग्विसर्गो०—यह श्लोक असम्बद्ध है।[6]

व्यास और नारद के संवाद में व्यास की भी निन्दा की है कि—

---

१. मनु० २।११॥

२. भाग० १।५।११॥ तत्र प्रथमचरणे 'तद् वाग्विसर्गो' इति पाठः।

३. उत्तरार्धे—'नामान्यनन्तस्य यशोन्वितानि यच्छृण्वन्ति इत्युच्यते, पूर्वार्धे च 'वाग्विसर्गः' उच्यते। वाग्विसर्गे श्रवणक्रिया न कथमपि सम्भवति' श्रवणक्रियायां च वाग्विसर्गो न भवितुं शक्नोतीत्यसंबद्धताऽत्र ज्ञेया।

४. द्र० भाग० १।४,५ अ०।

५. उक्त श्लोक में कहा है कि—'परम यशस्वी [कृष्ण] के गुणानुवाद से पशुघ्न (=याज्ञिक=यज्ञ करने वाले) के अतिरिक्त और कौन विमुख हो सकता है'? 'पशुघ्न' शब्द का मूल अर्थ 'याज्ञिक' है, जैसे 'गोघ्न' का 'अतिथि'। यथा 'गोघ्न' में गाय की हिंसा अभिप्रेत नहीं है, अपितु उसकी प्राप्ति अभिप्रेत है (घर आए श्रेष्ठ अतिथि को गोदान का विधान है)। अथवा—गो शब्द से गौ से निष्पन्न दूध दही आदि पदार्थ अभिप्रेत होते हैं, क्योंकि अतिथि को मधुपर्क देने का वैदिक विधान है। मधुपर्क गौ के दही आदि से ही बनता है। उसी प्रकार याज्ञिक को भी 'पशुघ्न' इसलिए कहा जाता है, कि वह अपने घर पशुओं का पालन करता है, और उनके घी, दूध, दही से यज्ञ करता है। विना घी-दूध के यज्ञ सम्भव ही नहीं। अतः पशुघ्न=याज्ञिक की निन्दा करने से अर्थापत्ति से वेद की भी निन्दा की है।

६. इस श्लोक के उत्तरार्ध से 'यशःसमन्वित नामों के श्रवण करने' का विधान है। और पूर्वार्ध में 'वाणी का विसर्ग' अर्थात् अव्यापार कहा है। वाणी का अव्यापार होने पर श्रवण क्रिया नहीं हो सकती, और श्रवणक्रिया होने पर वाणी का व्यापाराभाव नहीं माना जा सकता। अतः यह श्लोक असम्बद्ध है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ऽभूत्[1], तत्र नारद आगतः[2], पुनर्नारदेन बोधित[3] इति। व्यासस्तु नारायणावतार[4]स्तस्य कथं शोकः सम्भवेत् ?

भस्मासुरकथायां[5] शिवस्यापि निन्दा कृता—'भस्मासुरभयाच्छिवः कैलासं विहाय वनं गतवान्, पुनर्विष्णुना रक्षितः' इति कस्मादपि त्रैलोक्ये भयं न भवति शिवस्य। यदि कश्चिद् ब्रूयाद् दत्तवराय भस्मासुराय दण्डं न दत्तवान्, तर्हि रावणाय दत्तवराय शिवेन दण्डः कथं दत्तः ? यस्य क्रोधलेशेन सर्वं पञ्चभूतात्मकं जगद् भस्मीभूतं भवति, तस्य भयं कर्तुं कः समर्थः पुमान् भवेत् ?

बाणासुरकथायामपि[6] शङ्करस्य निन्दा कृता—'कृष्णेन शङ्करः पराजितः[7]' इति। कोऽपि शङ्करं पराजेतुं समर्थो नास्ति।

व्यासजी शोकातुर हो गये थे, वहां नारद मुनि पहुंचे और उन्होंने व्यासजी का शोक दूर किया। व्यासजी नारायण के अवतार [कहे गये हैं[7], तब] उन्हें शोक कैसे हो सकता है ?

भस्मासुर कथा में शिव की भी निन्दा की है कि—भस्मासुर के भय से शिव कैलाश छोड़ कर वन चले गये, फिर विष्णु ने उनकी रक्षा की। शिव को किसी से तीनों लोकों में भय नहीं हो सकता। यदि कोई कहे कि भस्मासुर को वर देने के कारण शिव ने दण्ड नहीं दिया, तो वर दिए हुए रावण को शिव ने क्यों दण्ड दिया ? जिस शिव के तनिक क्रोध से सारा पञ्चभूतात्मक जगत् भस्म (=प्रलय को प्राप्त) हो जाता है, उसको भयभीत करने में कौन मनुष्य समर्थ हो सकता है ?

बाणासुर की कथा में भी शङ्कर की निन्दा की है कि—'कृष्ण ने शङ्कर को हरा दिया।' कोई भी शङ्कर को पराजित करने में समर्थ नहीं है।

---

१. भाग० १।४।३२॥ २. भाग० १।५, अ० ६ ॥
३. भाग० १।३।२०—तत् सप्तदशो जातः सत्यवत्यां पराशरात्' इत्यादिश्लोके विष्णोः सप्तदशोऽवतारो व्यास इति वर्ण्यते।
४. द्र० भाग० १०।८८ अ०। भस्मासुरस्य वास्तविकं नाम वृकासुर आसीत्, स च शकुनेरसुरस्य पुत्रः। ५. द्र० भाग० १०।६३ अ०॥
६. मोहयित्वा तु गिरीशं जृम्भास्त्रेण जृम्भितम्। भाग० १०।६३।१४॥
७. व्यासजी को नारायण का १७वां अवतार माना है (भा० १।३।२०)।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

गृहस्थानामपि निन्दाकृता कपोतगुरुकरणकथायाम्[1]—'गृहस्थाश्रमोऽश्रेष्ठ[2]' इति।

यथा नदीनदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।
तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम् ॥[3]

श्रेष्ठ एव गृहाश्रमो व्यवहारे। अतोऽश्रेष्ठ इति कथनं यत् तत्प्रमत्तगीतमेव।

कृष्णस्यापि निन्दा कृता रासमण्डलचीरलीलाकथायाम्[4]—'परस्त्रीभिर्लीलां कृतवान्[5], नग्नदारा दृष्टवांश्चेति[6]'।

गृहस्थियों की भी कपोत-गुरुकरण (=कबूतर को गुरु बनाना) कथा में निन्दा की है कि—'गृहस्थाश्रम बुरा है।' किन्तु—

'जैसे छोटी बड़ी नदियां समुद्र में पहुंच कर स्थिर हो जाती है, वैसे ही सब आश्रमी (=ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी, संन्यासी) गृहस्थ में ही आश्रय को प्राप्त होते हैं' (अर्थात् इन सब के योगक्षेम का आधार गृहाश्रम ही होता है)। [मनु के इस वचन के अनुसार] व्यवहार में गृहाश्रम श्रेष्ठ है, उसे बुरा बताना प्रमादी पुरुष का कथन है।

कृष्ण की भी रासमण्डल और चीरहरण लीला में निन्दा की है कि—'पराई स्त्रियों के साथ लीला की, और नङ्गी स्त्रियों को देखा।'

---

१. द्र० भाग० १०।७।३३ तथा ५२—७४॥
२. द्र०—पुष्णन् कुटुम्बं कृपणः सानुबन्धोऽवसीदति। भाग० १०।७।७३॥
३. मनु० ६।९०॥
४. रासमण्डल कथा—भाग० १०। २९—३३ अ०॥ चीरलीला=चीरहरण-लीला-भाग० १०।२२ अ०॥
५. भाग० १०। अ० ३३—तत्रारभत गोविन्दो रासक्रीडामनुव्रतैः। स्त्रीरत्नैरन्वितः प्रीतैरन्योन्यावद्धबाहुभिः॥ २॥ इत आरभ्य २६ श्लोकपर्यन्तं रासक्रीडा द्रष्टव्या।
६. ततो जलाशयात् सर्वा दारिकाः शीतवेपिताः। पाणिभ्यां योनिमाच्छाद्य प्रोत्तेरुः शीतकर्षिताः। भाग० १०। २२। १७ इत्यारभ्य विंशश्लोकपर्यन्तं द्रष्टव्यम्।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri Gyaan Kosha

अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः ।
परदारोपसेवा च शारीरं त्रिविधं स्मृतम् ॥[1]

पापमिति शेषः ।

नाग्निं मुखेनोपधमेन्नग्नां नेक्षेत च स्त्रियम्[2] ।

इत्याह भगवान् मनुः । अस्माद्विरोधाल्लोकविरोधाच्च प्रमत्तगीतमेतत् ।

आप्तकामो यदुपतिः कृतवान् वै जुगुप्सितम् ।
किमभिप्राय एतन्नः संशयं छिन्धि सुव्रत ॥[3]

अत्राऽपि कृष्णस्य निन्दा कृता । सर्वज्ञः कृष्णः कदाचिज्जुगुप्सितं कर्म न कुर्यात् ।

सुभद्राहरणकथायां कृष्णार्जुनसुभद्राणां निन्दैव कृता—'कृष्णः कपटरूपिणमर्जुनं महात्मास्तीति कथितवान्[5] इति; अर्जुनः कपटरूपं कृतवान्[6] इति; सुभद्राऽपि निन्दितं कर्म कृतवती[7]' इति ।

किन्तु 'विना दिए पदार्थों को ग्रहण करना, विधान के विना हिंसा करना, पराई स्त्रियों का सेवन करना, तीन प्रकार का शारीरिक पाप कहा गया है ।' और—'मुख से अग्नि को न फूंके, नङ्गी स्त्रियों को न देखे' ऐसा मनु ने कहा है । [मनुस्मृति के साथ] विरोध होने से तथा लोक से विरुद्ध होने से [उक्त कथायें] प्रमादी पुरुष की कही हुई हैं ।

आप्तकामो यदुपतिः०—इस श्लोक में भी कृष्ण की निन्दा की है[8]। सर्वज्ञ[9] कृष्ण कभी निन्दित कर्म नहीं कर सकता ।

सुभद्राहरण कथा में कृष्ण, अर्जुन और सुभद्रा की निन्दा की है

---

१. मनु० १२।७॥ २. मनु० ४।५३॥ ३. भाग० १०।२३।२९॥
४. द्र० भाग० १०।८६ अ० ॥
५. एकदा गृहमानीय आतिथ्येन निमन्त्र्य तम् । भाग १०।८६।५॥
६. तल्लिप्सुः स यतिर्भूत्वा त्रिदण्डी द्वारकामगात् । भाग० १०।८६।३॥
७. सापि तं चकमे वीक्ष्य नारीणां हृदयंगमम् । हसन्ती व्रीडितापाङ्गी तन्यस्तहृदयेक्षणा ॥ भाग० १०।८६।७॥
८. इस श्लोक में कहा है—'सब कामनाओं से पूर्ण कृष्ण ने रासक्रीड़ा जैसे निन्दित कर्म क्यों किए.....।' अर्थात् कृष्ण को निन्दित कर्म करने वाला बताया है ।
९. पौराणिकों के मतानुसार कृष्ण को सर्वज्ञ मानकर यह पंक्ति लिखी है ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इन्द्रस्यापि गोवर्धनोद्धरणकथायां[1] निन्दा कृता—इन्द्रो लज्जितो बभूव[2] इति।

अष्टाशीतिसहस्राणामृषीणां महात्मनां निन्दैव कृता सप्ताहोत्थान-कथायाम्[3]—'तेषां मध्ये एकोऽपि परीक्षितं समाधातुं समर्थो नेति।[4]'

ब्रह्मणोऽपि वत्सहरणहंसावतरणकथायां[5] निन्दैव कृता—'अज्ञानी ब्रह्मा[6]' इति।

ततः पुष्करतः सृष्टस्सर्वज्ञो मूर्तिमान् प्रभुः।
ब्रह्मा वेदमयः साक्षात् प्रजापतिरनुत्तमः॥[7]

कि—'कृष्ण ने कपट रूपधारी अर्जुन को महात्मा बताया, अर्जुन ने कपट रूप धारण किया, और सुभद्रा ने भी निन्दित कर्म किया।'[8]

गोवर्धन-उद्धरण कथा में इन्द्र की भी निन्दा की है कि—'इन्द्र लज्जित हो गया।'

सप्ताहोत्थान कथा में अस्सी सहस्र ऋषि-महात्माओं की निन्दा की है कि—'उनमें से एक भी परीक्षित की शङ्का का समाधान करने में समर्थ नहीं हुआ'।

वत्सहरण और हंसावतरण कथा में ब्रह्मा की भी निन्दा की—'अज्ञानी

---

१. भाग० १०।२५॥

२. कृष्णयोगानुभावं तं निशम्येन्द्रोऽतिविस्मितः। निस्तब्धो भ्रष्टसंकल्पः स्वान मेघान् स न्यवारयत्॥ भाग० १०।२५।२४॥

३. द्र० भागवत माहात्म्य ५।४१॥ ४. अन्वेषणीयम्।

५. वत्सहरणकथा भाग० १०।१३,१४ अ०॥ हंसावतरणकथा—भाग० ११। १३।१९, तथाग्रे।

६. अतः क्षमस्वाच्युत मे रजोभुवो ह्यजानतस्त्वत्पृथगीशमानिनः। अजावले पान्यतमसोऽन्धचक्षुष एषोऽनुकम्प्यो मयि नाथवानिति॥ भाग० १०। १४। १०॥ एवमेव 'ब्रह्माणमग्रतः कृत्वा पप्रच्छुः को भवानिति'। भाग० ११। १३।२०॥ ७. अनुपलब्धमूलमिदम्।

८. भागवत में कहा है कि 'अर्जुन ने सुना कि बलराम सुभद्रा का विवाह दुर्योधन से करना चाहते हैं, तो अर्जुन भिक्षु का रूप बनाकर द्वारका पहुंचा, और वहां उसने आसन जमाया। कृष्ण ने पहचान कर उसे अतिथि (महात्मा) के रूप में भिक्षा के लिए आमन्त्रित किया। सुभद्रा उस भिक्षु के कान्त शरीर को देखकर उस पर आसक्त हो गई, इत्यादि।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इति महाभारतविरोधात् प्रमत्तगीतमेतत् ।

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न कुत्रचित् ॥[1]

महाभारताद् विरुद्धं यत्तन्न व्यासप्रोक्तमिति महाभारते । इदं तु भागवत महाभारताद् विरुद्धमेवास्ति[2] तस्मात् प्रमत्तगीतमेव ।

"वन्दे महापुरुषचरणारविन्दम्"[3] [इति]

ब्रह्मा' ऐसा कहा । [किन्तु यह महाभारत के] 'पश्चात् कमलरूपा पृथिवी के निष्पादन के अनन्तर उत्पन्न किया सर्वज्ञ शरीरधारी प्रभु ब्रह्मा को, जो साक्षात् वेदमय और श्रेष्ठतम प्रजापति था' इस वचन से विरुद्ध होने से [भागवत का ब्रह्मा को अज्ञानी कहना] प्रमादी पुरुष का कथन है ।

'धर्म अर्थ काम और मोक्ष के विषय में हे भरतर्षभ ! जो यहां (= महाभारत में कहा गया) है, वही अन्यत्र (=अन्य ग्रन्थों में) है, जो यहां नहीं हे, वह कहीं नहीं है' । [इस वचन के अनुसार] महाभारत से जो विरुद्ध है, वह व्यास जी का कहा नहीं है, ऐसा महाभारत में [कहा है] । यह भागवत महाभारत से विरुद्ध ही है[4] इसलिए प्रमत्तगीत है ।

'वन्दे महापुरुष०--'प्रणाम करता हूं हे महापुरुष ! तुम्हारे चरणारविन्दों को' यह कथन भी—

---

१. महाभारत आदि० ६२।५३। चित्रशाला-पूना-संस्करणे 'न तत् क्वचित्' इति चतुर्थचरणे पाठः ।

२. महाभारते कृष्णस्य यच्चरितं व्यासेनोक्तं तदत्यन्तं श्रेष्ठं वर्तते । तत्र कृष्णस्य किञ्चिदपि गर्हितं कर्म न निर्दिष्टम् । द्र० महाभारते सभापर्वणि अष्टात्रिंशत्तमेऽध्याये भीष्मकृतं कृष्णवर्णनम्, एकचत्वारिंशे चाध्याये शिशुपालकृतं कृष्णदोषवर्णनम् ।

३. भाग० ११।५।३३,३४ उत्तरार्ध ।

४. महाभारत में कृष्ण का चरित अत्यन्त श्रेष्ठ कहा है । शिशुपाल जैसे विरोधी को भी कृष्ण के चरित में कहीं भी कोई वास्तविक दोष दिखाने को नहीं मिला । देखिए महाभारत सभापर्व अ० ३८ में भीष्म द्वारा कृष्णचरित-वर्णन तथा अ० ४० में शिशुपाल द्वारा कृष्णदोषवर्णन ।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

द्यां मूर्धानं यस्य विप्रा वदन्ति
खं वै नाभिं सोमसूर्यौ च नेत्रे ।
दिशः श्रोत्रे यस्य पादौ क्षितिश्च
ध्यातव्योऽसौ सर्वभूतान्तरात्मा ॥१॥[1]
यद्वाचाऽनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥२॥[2]
यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनो मतम् ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥३॥[3]

इत्यादिभ्यः श्रुतिभ्यो विरुद्धं चरणारविन्दवन्दनादिकमेव । अतोऽकथनीयम् अश्रवणीयं चेदं प्रमत्तगीतं भागवतम् ।

पूर्वापरविरुद्धमप्यस्ति—

नृसिंहेन प्रह्लादाय वरो दत्तः—'एकविंशतिपित्राद्यास्तव मोक्षं गच्छन्तु ।'[4] पुनरुक्तं प्रमत्तेन—'तावेव रावणकुम्भकर्णौ बभूवतुः[5], पुनस्तावेव

द्यां मूर्धानम्०—द्युलोक को जिसका शिर विप्र लोग कहते हैं, आकाश को नाभि, चन्द्र सूर्य को दोनों नेत्र, दिशाओं को श्रोत्र, और जिसके पैर पृथिवी [कहे जाते हैं], जो ध्यान करने योग्य है, वह सब भूतों का अन्तरात्मा है ।

यद्वाचा०—जो वाणी से कहा नहीं जा सकता, जिसकी शक्ति से वाणी बोलती है, उसी को ब्रह्म तू जान । नहीं है यह जिसकी तू उपासना करता है ।

यन्मनसा०—जो मन से विचारा नहीं जा सकता, जिससे मनन शक्ति को प्राप्त कर मन विचारता है, उसी को ब्रह्म तू जान । नहीं है यह जिसको तू उपासना करता है ।

इत्यादि श्रुतियों से विरुद्ध ही है, चरणारविन्द का वन्दन । इसलिए कहने और सुनने योग्य नहीं है, यह प्रमत्तगीत भागवत ।

पूर्वापर विरुद्ध भी है—

नृसिंह ने प्रह्लाद को वर दिया—'तेरे २१ इक्कीस पितादि मोक्ष को

---

१. वायुपुराण ९।१२०॥ २. केन उ० १।४॥ ३. केन उ० १।५।
४. त्रिः सप्तभिः पिता पूतः पितृभिः सह तेऽनघ । भाग० ७।१०।१८ ॥
५. पुनश्च विप्रशापेन राक्षसौ तौ बभूवतुः । कुम्भकर्णदशग्रीवौ·····। भा०७।१०।३६॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

शिशुपालदन्तवक्त्रौ बभूवतुः[1]' इति च विरुद्धमेव।

भवान् कल्पविकल्पेषु न विमुह्यति कर्हिचित्।[2]

इति ब्रह्मणे वरो दत्तो नारायणेन। पुनरुक्तम्—'ब्रह्मा मोहितो भूत्वा वत्सहरणं कृतवान्[3]' इति विरुद्धमेव।

'कृष्णो नग्नां बाणासुरमातरं न दृष्टवान्[4]'। पुनरुक्तं प्रमत्तेन—'चीरलीलां कृतवान्'[5] इति विरुद्धमेव।

भस्मासुरकथायां शिवस्य निन्दां[6] कृत्वा पुनर्विषपानकथायाँ[7] 'भवानेव विष्ण्वादीनामीश्वरः'[8] इति विरुद्धमेव।

प्राप्त हों'। फिर कहा प्रमादी ने—'वे [हिरण्याक्ष-हिरण्यकश्यप] ही रावण और कुम्भकर्ण हुए, और पुनः वे ही शिशुपाल और दन्तवक्त्र हुए' यह [कथन परस्पर] विरुद्ध ही है।

भवान् कल्प०—'आप कल्प=सृष्टि और विकल्प=प्रलय में कभी मोह को प्राप्त नहीं होते'। ऐसा ब्रह्मा को वर दिया नारायण ने। पुनः कहा—'ब्रह्मा ने मोहित होकर [गोपों की गौवों के] बछड़ों का हरण किया' यह कथन परस्पर विरुद्ध ही है।

'कृष्ण ने बाणासुर की नङ्गी माता को नहीं देखा'। पुनः कहा प्रमादी ने—'चीरहरण लीला की' (उसमें स्नान करती हुई स्त्रियों के वस्त्र उठा लिए और वस्त्र लेने के लिए उनको नङ्गी बाहर आने पर बाध्य किया)। यह कथन परस्पर विरुद्ध ही है।

भस्मासुर की कथा में शिव की निन्दा करके पुनः विषपान कथा में—'आप ही विष्णु आदि के ईश्वर हैं', [ऐसा कहा]। यह कथन परस्पर विरुद्ध ही है।

---

१. ताविहाथ पुनर्जातौ शिशुपालकरूषजौ। भाग० ७।१७।३८॥ करूषजस्यैवापरं नाम दन्तवक्त्र आसीत्। द्र० भाग० ९।२४—श्रुतदेवां तु करूषो वृद्धशर्मा समग्रहीत्। यस्यामभूद् दन्तवक्त्रः ऋषिशप्तो दितेः सुतः। काशीसंस्करणे—'कारूषो', 'दन्तवक्त्रः', 'ऋषिसप्तो' पाठा अशुद्धः सन्ति। २. भाग २।९।३६॥

३. द्र० भागवत १०।१४।१०; पूर्व पृष्ठ १२, टि० ५ निर्दिष्टौ श्लोकौ।

४. तन्माता कोटरा नाम नग्ना मुक्तशिरोरुहा।.....ततस्तिर्यङ्मुखो नग्नामनिरीक्षन् गदाग्रजः॥ भाग० १०।६३।२०,२१॥ ५. द्र० भाग० १०।२२।१७—२०॥

६. द्र० भाग० १०।८८ अ०॥ ७. भाग० ८।७।२०—४५॥

८. भाग० ८।७।२१—३७ श्लोकानां सारोऽयम्।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः[1] इति श्रुतेः; नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते[2] इति स्मृतेश्च। एवं सति 'भक्तिरेव मोक्षदात्री'[3] इति वेदादिभ्यो विरुद्धमेव।

अतः कुग्रन्थस्य भागवताख्यस्यास्य कर्ता मूर्ख एव। अस्मात् कारणात् सुखेप्सुभिः कदाचिदिदं प्रमत्तगीतं न कथनीयं न श्रोतव्यं चेति सिद्धान्तः। ये तु लोभाच्छ्रावयन्ति मूर्खत्वाच्छृण्वन्ति ते वै नरके पतिष्यन्ति। ये प्रमत्तगीतमिदं भागवतं श्रावयन्ति शृण्वन्ति च, ते सर्वे पाषण्डिनः अत एव महापातकिनः सन्ति। यश्च कथितवान् वोपदेवः, सोऽपि पाषण्डी महापातकी चास्ति। अत एव प्रमत्तगीतस्यास्य भागवतस्याध्ययनमध्यापनं श्रवणं च नरकगमनमेव। किं बहुना लेखेन, एतावतैव वेदितव्यं युष्माभिः। एवमेव--

जन्माद्यस्य यतोऽन्वयादितरश्च[4]

'विना ज्ञान के मुक्ति नहीं होती' यह श्रुति का [वचन है]। और 'नहीं' ज्ञान के सदृश पवित्र इस ससार में है' यह स्मृति (=गीता) का [वचन है]। ऐसा होने पर 'भक्ति ही मोक्षदायिनी है' यह कथन वेदादि शास्त्रों से विरुद्ध ही है।

इसलिए भागवत नाम के इस कुग्रन्थ का कर्ता मूर्ख ही है। इस कारण सुख चाहने वालों को कभी इस प्रमत्तगीत भागवत की कथा और श्रवण नहीं करना चाहिये, यही सिद्धान्त है। जो लोग लोभ से सुनाते हैं, और जो मूर्ख होने से सुनते हैं, वे निश्चय ही नरक में पड़ेंगे। जो इस प्रमत्तगीत भागवत को सुनाते और सुनते हैं, वे सब पाखण्डी हैं, इसलिए वे महापातकी हैं। जिस वोपदेव ने इस भागवत को कहा (=रचा) वह भी पाखण्डी और महापातकी है। इसलिए प्रमत्तगीत इस भागवत का अध्ययन, अध्यापन, कथन, श्रवण करना नरक-गमन का कारण है। बहुत लिखने से क्या, इतने से ही आप लोगों को जान लेना चाहिये। इसी प्रकार 'जन्माद्यस्य०' आदि श्लोकों से बनाया गया यह भागवत सारा ही अशुद्ध है।

---

१. अनुपलब्धमूलम्।
२. गीता ४।३८॥
३. द्र० भाग० माहात्म्य अ० ६, श्लोक ८३—भक्त्या विमुच्येन्नरः। भाग० ११।१४। १८—२५ द्रष्टव्य।
४. भाग० १।१।१॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

इत्यादिश्लोकैर्निर्मितमिदं भागवतं सर्वमशुद्धमिति।

कथं तर्हि श्रीधरादिभिरशुद्धस्योपरि टीका कृता ? अज्ञानात्। कुत एतदज्ञानत्वं तेषु श्रीधरादिषु ? न ज्ञातमशुद्धं तः अतोऽज्ञानत्वमेव।

'सत्यं परं धीमहि'[1] इत्यत्र शिष्याभिप्रायं वहुवचनम्[2] इत्युक्तवान् प्रमत्तः श्रीधर इति। शिष्यास्तु युष्मदि वर्तन्ते,[3] कुतोऽभिप्रायस्तत्रायातः[4] ? एकोऽपि ब्रूयाद्देव 'अहं ब्रवीमि,' 'वयं ब्रूमो' वा। अस्मदो द्वयोश्च[5] इति व्याकरणसूत्रात्। अतोऽशुद्धमेतत् 'शिष्याभिप्रायं बहुवचनम् इति।

अन्यकृतमिति न शङ्कनीयम् इत्युक्तं श्रीधरेण। 'प्राप्तौ सत्यां निषधः'[6] अतोऽन्यकृतमेव।

नायं श्रीधरनामा। कस्तर्हि ? दरिद्राधरनामैवास्ति। कुतः ? मूर्ख-

---

तो श्रीधर ने इस अशुद्ध [भागवत] पर कैसे टीका लिखी ? अज्ञान से। उन श्रीधरादि में यह अज्ञान कैसे [जाना जाए ?] यह अशुद्ध है, ऐसा उन्होंने नहीं जाना, इससे अज्ञान ही है।

'सत्यं परं धीमहि'—इसमें **'शिष्यों के अभिप्राय से बहुवचन है'** ऐसा प्रमादी श्रीधर ने कहा है। शिष्यों का निर्देश 'युष्मद्' से होता है, [इसलिए] उनका अभिप्राय कहां से आया ? [अर्थात् उनके अभिप्राय से 'धीमहि' में बहुवचन कैसे हो सकता है ?] एक व्यक्ति भी कह सकता है—'मैं कहता हूं' अथवा 'हम कहते हैं'। **अस्मदो द्वयोश्च** (=अस्मद् शब्द से दो और एक में बहुवचन का प्रयोग होता है), इस व्याकरण-सूत्र के नियम से। इसलिए 'शिष्यों के अभिप्राय से बहुवचन है' कहना अशुद्ध ही है।

'यह भागवत अन्यकृत है (व्यासकृत नहीं है), ऐसी शङ्का नहीं करनी चाहिए' ऐसा श्रीधर ने लिखा है। **'प्राप्ति होने पर ही निषेध किया जाता है'** इस न्याय से अन्यकृत ही [भागवत है, ऐसा जानना चाहिए]।

यह [भागवत का टीकाकार] **श्रीधर** (=लक्ष्मी=विद्या का धारण

---

१. भाग० १।१।१॥ २. भाग० १।१।१ टीकायाम्।

३. शिष्यान् प्रति भागवतस्य प्रवचनात्—'हे शिष्याः ·····वयं सत्यं परं धीमहि, तद्यूयं शृणुत' इत्यभिप्रायात्।

४. 'धीमहि' क्रियांशे शिष्याणामन्वयाभावात्। ५. अष्टा० १।२।५९॥

६. लौकिकोऽयं न्यायः।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

त्वात्। किं बहुना लेखेन। श्रीधरादीनां ज्ञानमेव नास्ति वेदादिषु इति स्थालीपोलाकन्यायवल्लेखनं कृतमस्माभिः। तद् युष्माभिर्वेदितव्यम्—सर्वं भागवतमशुद्धमिति।[1]

ब्राह्मणक्षत्रियविट्शूद्रा वर्णाः, ब्रह्मचारिगृहिवनिसंन्यासिन आश्रमाश्च ज्ञातव्याः। एषां वेदेषु मनुस्मृतौ च धर्मा उक्ताः। एभ्यो ये विरोधिनस्ते पाषण्डिन एव। किंलक्षणास्ते? चक्राद्यङ्कनकेवलोर्ध्वपुण्ड्रकाष्ठमालाधारिणः। तप्तमुद्रोर्ध्वपुण्ड्रे द्वे नरकवाससाधने। तस्मात् त्याज्यमनर्घैद्विजैर्नरकभीरुभिरिति जाबालिः—

विभूतिधारणं त्यक्त्वा त्यक्त्वा रुद्राक्षधारणम्।
मां मा पूज्य विश्वेशं शिवलिङ्गरूपिणम्॥[2]

इत्याह विष्णपुराणे।

'यज्ञो वै विष्णुः'[3] इति श्रुतेर्यज्ञकर्ता वैष्णवो नान्यः।

करने वाला) नाम वाला भी नहीं है, अपितु दरिद्राधर (=दारिद्रच=मौर्ख्य का धारण करने वाला) नाम वाला ही है। क्यों? मूर्ख होने से। बहुत लिखने से क्या? श्रीधरादि को वेदादि के विषय में ज्ञान ही नहीं है, यह हमने स्थाली-पुलाक न्याय से लिखा है। इसलिए आप लोगों को जानना चाहिए कि सारा भागवत ही अशुद्ध है।

ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र ये चार वर्ण, तथा ब्रह्मचारी गृहस्थ वानप्रस्थ और संन्यासी ये चार आश्रम जानने चाहियें। इनके धर्म वेदों तथा मनुस्मृति में कहे हैं। उनके जो विपरीत है वे पाखण्डी ही हैं। उनके क्या लक्षण हैं? चक्र आदि से शरीर के दागने, ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक और काठ (=तुलसी आदि) की माला का धारण करने वाले। गरम चक्र आदि से मुद्रा करना (दागना) और ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक लगाना नरक-गमन के साधन हैं। इसलिए ये त्याज्य हैं नरक से डरने वाले श्रेष्ठजनों द्वारा। ऐसा जाबालि ने—'विभूति का धारण छोड़कर तथा रुद्राक्ष का धारण छोड़कर मुझ शिवलिङ्ग रूपी विश्वेश की पूजा मत कर' ऐसा विष्णु पुराण में कहा है।

'यज्ञ ही विष्णु है' ऐसा श्रुति का कथन होने से यज्ञ करने वाला ही वैष्णव (=विष्णुभक्त) है, अन्य नहीं।

---

१. भागवतं तट्टीका चेत्यभिप्रायः। २. अनुपलब्धमूलमिदम्।
३. शत० १३।१।८।८ कौ० ब्रा० ४।२; १८।८, १४ इत्येवं बहुत्र।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

बृहन्नारदीये पुराणे धर्मभगीरथसंवादे भगीरथं प्रति धर्मराजवाक्यम्—

यस्तु संतप्तशङ्खादिलिङ्गाङ्कितततनुर्नरः ।
स सर्वयातनाभागी चाण्डालः कोटिजन्मसु ॥[1]

एतल्लक्षणाः पाषण्डिनः ये तु पाषण्डिमतविश्वासिनस्तेऽपि पाषण्डिनः ।

पाषण्डिनो विकर्मस्थान् वैडालव्रतिकान् शठान् ।
हैतुकान् वकवृत्तींश्च वाङ्मात्रेणापि नार्चयेत् ॥[2]

इत्याह मनुः । अत एव वाङ्मात्रेणापि पाषण्डिभिस्सह व्यवहारो न कर्तव्यः ।

पाषाणादिमूर्तिपूजनं पाषण्डिमतमेव । कुत एतत् ? वेदादिभ्यो विरोधात्—

यद् वाचाऽनभ्युदितं येन वागभ्युद्यते ।
तदेव ब्रह्म त्वं विद्धि नेदं यदिदमुपासते ॥ [१][3]
यन्मनसा न मनुते येनाहुर्मनो मतम् । तदेव० ॥२॥[3]

बृहन्नारदीय पुराण में धर्म-भगीरथ के संवाद में भगीरथ के प्रति धर्म राज का वाक्य है—जो अत्यन्त तपाए हुए शंख आदि से अङ्कित शरीर वाला मनुष्य है, वह सर्व दुःखों का भागी करोड़ों जन्म तक चाण्डाल होता है । इसलिए इस प्रकार के चिह्नों वाले पाखण्डी हैं । और जो पाखण्डियों के मत के विश्वासी हैं, वे भी पाखण्डी हैं ।

'पाखण्डियों' बुरे कर्म करने वालों, वैडालव्रतवालों, शठों, कुतर्कियों और बगुलाभक्तों का वाणीमात्र से भी सत्कार न करे' ऐसा मनु ने कहा है । इस लिए वाणीमात्र से भी पाखण्डियों के साथ व्यवहार नहीं रखना चाहिए ।

पाषाणादि मूर्तियों का पूजन पाखण्डी मत ही है । क्यों ? वेदादि से विरुद्ध होने से—

'जो वाणी से नहीं कहा जाता, जिससे वाणी बोलने में समर्थ होती है, उसे ही ब्रह्म तू जान । नहीं है यह जिसकी उपासना करता है' ।

'जो मन से नहीं विचारा जाता, जिससे मन विचारने में समर्थ होता

---

१. अनुपलब्धमूलमिदम् । २. मनु० ४।३०॥ ३. केन उ० १।४-५॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

यत्प्राणेन न प्राणते येन प्राणः प्रणीयते । तदेव० ॥३॥[1]

इत्यादिश्रुतिभ्यः । अत एव पाषाणादिकृत्रिम[2] मूर्तिपूजनं वृथैव ।

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः ।[3]

इति भगवद्गीतावचनात् ।

किं बहुना लेखेन, एतावतैव सज्जनैर्वेदितव्यम् विदित्वाऽऽचरणीयमेव ।

दयानन्दसरस्वत्याख्येन स्वामिना निर्मितमिदं पत्रं वेदितव्यं विद्वद्भिरिति । शुभं भवतु वक्तृभ्यश्श्रोतृभ्यश्च ।

वेदोपवेदवेदाङ्गमनुस्मृतिमहाभारतहरिवंशपुराणानां वाल्मीकिनिर्मितस्य रामायणस्य चाध्यापनमध्ययनं कर्तव्यं कारयितव्यं च । एतेषामेव श्रवणं कर्तव्यमिति ।

है, उसे ही०'

'जो प्राणवायु से जीवित नहीं होता, जिससे प्राण गति करता है, उसे ही० ।

इत्यादि श्रुतियों से [विरुद्ध है] । इसलिए पाषाण आदि की कृत्रिम मूर्तियों की पूजा व्यर्थ है ।

'मूर्ख लोग अव्यक्त (—अप्रकट रहने वाले) मुझको व्यक्त (प्रकट—हुआ—शरीर-धारण किया हुआ) मानते हैं' इस भगवद्गीता के वचन [के विरोध] से भी ।

बहुत लिखने से क्या ? इतने से ही सज्जनों को जान लेना चाहिए और जानकर [उनके अनुसार] आचरण करना चाहिए ।

दयानन्द सरस्वती नाम के स्वामी ने यह [विज्ञापन] पत्र बनाया है, ऐसा विद्वानों को जानना चाहिए । कल्याण हो वक्ताओं और श्रोताओं के लिए ।

वेद उपवेद वेदाङ्ग मनुस्मृति महाभारत हरिवंश पुराण आदि और वाल्मीकि-निर्मित रामायण का पठन-पाठन करना कराना चाहिए, और इन्हीं का श्रवण करना चाहिये ।

इति श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना निर्मितस्य भागवखण्डनस्य युधिष्ठिरमीमांसकविहित आर्यभाषानुवादः समाप्तः ॥

---

१. केन० उ० १।१॥

२. 'कर्त्रिम' इति पूर्वमुद्रितोऽपपाठः ।

३. गीता ७।२४॥

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

परिशिष्ट

'भागवत-खण्डन' और 'सत्यार्थ-प्रकाश' की तुलना

ऋषि दयानन्द ने 'भागवत-खण्डन' पुस्तक लिखने के लगभग ८ वर्ष पश्चात् 'सत्यार्थ-प्रकाश' नामक ग्रन्थ लिखा। यह सं० १९३२ (सन १८७५) में प्रकाशित हुआ। इसके लगभग ७-८ वर्ष पश्चात् सं० १९३९ में 'सत्यार्थ-प्रकाश' का संशोधित संस्करण तैयार किया, जो सं० १९४० में प्रकाशित हुआ। ग्रन्थकार द्वारा स्वयं संशोधित होने के कारण यद्यपि द्वितीय संस्करण ही प्रामाणिक है, तथापि तुलना के लिए हम यहां दोनों के पाठ उद्धृत करते हैं। 'सत्यार्थ-प्रकाश' के दोनों संस्करणों में 'भागवत' पुराण के खण्डन में जो कुछ लिखा है, उसके कई अंश प्रस्तुत 'भागवत-खण्डन' पुस्तक के साथ प्रायः मिलते हैं। यथा—

१. **भागवत-खण्डन**[1]—शुक तो भारतयुद्ध से पूर्व ही मोक्ष को प्राप्त हो गया था, ऐसा महाभारत के शान्तिपर्व में लिखा है। इसलिए अशुद्ध ही है कि—शुक ने परीक्षित के लिए भागवत कहा[2]। (पृष्ठ ३)

सत्यार्थ-प्रकाश प्र० सं०—शुकाचार्य व्यास जी का पुत्र परीक्षित के जन्म से १०० वर्ष पहले ही मर गया था, परीक्षित का जन्म पीछे भया। सो मोक्षधर्म में महाभारत के लिखा है। फिर जो मनुष्य कहते हैं कि शुकाचार्य ने सप्ताह सुनाया, सो केवल मिथ्या है। क्योंकि उस समय शुकाचार्य का शरीर नहीं था। (पृष्ठ ३६५)

भागवत-खण्डन—"ज्ञानं परमं गुह्यं मे यद्विज्ञानसमन्वितम्"—जो परम गुह्य ज्ञान होता है, वह विज्ञान ही होता है। अतः पुनः 'विज्ञान-

---

१ यद्यपि 'भागवत खण्डन' मूल रूप से संस्कृत में है, तथापि तुलना के लिए हम उसका आर्यभाषानुवाद ही दे रहे हैं।

२. महाभारत शान्तिपर्व के अन्तर्गत मोक्ष-धर्म प्रकरण (अ० ३३३) में भीष्म ने शुकदेव की मोक्ष-प्राप्ति कथा कही है। शान्तिपर्व की समस्त कथाएं भारतयुद्ध के पश्चात् भीष्म ने महाराज युधिष्ठिर के प्रति कही हैं।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

समन्वितम्' (=विज्ञान से युक्त कहना) व्यर्थ है। इसी प्रकार चतुःश्लोकी[1] अशुद्ध है। (पृष्ठ ४)

सत्यार्थ-प्रकाश प्र० सं०—चतुःश्लोकी[1] सब भागवत का मूल मानते हैं—

ज्ञानं परमं गुह्यं मे यद्विज्ञानसमन्वितम्।
सरहस्यं तदङ्गं च गृहाण गदितं मया॥

इत्यादिक चार श्लोक बना लिए हैं। क्योंकि परम और गुह्य ये दोनों ज्ञान के विशेषण होने से वही विज्ञान हो जाता है, फिर **'यद्विज्ञानसमन्वितम्'** यह जो उसका कहना, सो मिथ्या हो जाता है। क्योंकि रहस्य नाम एकान्त और गुह्य का ही है। **परमज्ञान** के कहने से तदङ्ग अर्थात् मुक्ति का अङ्ग है; यह उसका कहना मिथ्या ही है। क्योंकि परमज्ञान जो होता है, सो मुक्ति का अङ्ग ही होता है। जैसा यह श्लोक मिथ्या है, वैसा सब भागवत भी मिथ्या है·····। (पृष्ठ ३६५)

सत्यार्थ-प्रकाश द्वि० सं०—अब जिसको 'श्रीमद्भागवत' कहते हैं, उस की लीला सुनो। ब्रह्माजी को नारायण ने चतुःश्लोकी[1] भागवत का उपदेश किया—

ज्ञानं परमं गुह्यं मे यद्विज्ञानसमन्वितम्।
सरहस्यं तदङ्गं च गृहाण गदितं मया॥

भा० स्क० २, अ० ९, श्लो० ३०॥

हे ब्रह्माजी! तू मेरा परम गुह्य ज्ञान, जो विज्ञान और रहस्य युक्त, और धर्म अर्थ काम मोक्ष का अङ्ग है, उसी का मुझसे ग्रहण कर।

जब विज्ञानयुक्त कहा तो अर्थात् [श्रेष्ठ] ज्ञान का विशेषण रखना व्यर्थ है, और गुह्य विशेषण भी पुनरुक्त है। जब मूल श्लोक अनर्थक है, तो ग्रन्थ अनर्थक क्यों नहीं? (पृष्ठ ३३२)

३. **भागवत-खण्डन**—**'निगमकल्पतरोः'** इस श्लोक में वेद की निन्दा की है। (पृष्ठ ६)

सत्यार्थ-प्रकाश प्र० सं०—फिर भी **निगमकल्पतरोर्गलितं फलम्** इत्यादिक श्लोकों से केवल वेदों की निन्दा ही की है···। (पृष्ठ ३६८)

४. **भागवत-खण्डन**—व्यास और नारद के संवाद में व्यास की भी

---

१ भाग० २।९।३१-३४ तक मूल भागवत चतुःश्लोकी। आगे उद्धियमाण श्लोक चतुःश्लोकी की भूमिकारूप है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

निन्दा की है कि—'व्यास जी शोकातुर हो गये थे। वहां नारदमुनि पहुंचे और उन्होंने व्यास जी का शोक दूर किया'। व्यासजी नारायण के अवतार कहे गये हैं[1], तव उन्हें शोक कैसे हो सकता है? (पृष्ठ ८-९)

सत्यार्थ-प्रकाश प्र०सं०—व्यासजी ने वेद-वेदाङ्ग विद्याओं को पढ़ लिया ....फिर भी सरस्वती नदी के तट में एक वृक्ष के नीचे शोकातुर होके जैसे रोते होते वैसे बैठे थे। उस समय में वहां नारद आए...। नारदजी वोले—तुमने भागवत कथा नहीं किई, और ऐसा ग्रन्थ भी कोई नहीं बनाया जिसमें भागवत कथा हो, सो आप भागवत बनावें कृष्णजी के गुणयुक्त, तव आपका चित्त शान्त होगा। इसमें विचार करना चाहिए कि व्यासजी जो नारायण के अवतार होते तो उनको अज्ञान शोक और मोह क्यों होता? और उनको अज्ञानादिक थे। जो अज्ञानी का वनाया ज़ा भागवत, उसका प्रमाण नहीं हो सकता। फिर इस कथा में वेदादिकों की केवल निन्दा आती है, क्योंकि वेदादिकों के पढ़ने से व्यासजी को ज्ञान नहीं भया, तो हम लोगों को कैसे होगा? (पृष्ठ ३६७-३६८)

५. **भागवत-खण्डन**—कृष्ण की भी रासमण्डल और चीरहरण लीला में निन्दा की है—पराई स्त्रियों के साथ लीला और नंगी स्त्रियों को देखा। (पृष्ठ १०)

सत्यार्थ-प्रकाश प्र० सं०—श्रीकृष्ण विद्वान् धर्मात्मा और जितेन्द्रिय थे, ऐसा महाभारत की कथा से यथावत् निश्चित होता है। इस से श्रीकृष्ण की जैसी निन्दा इसने कराई, ऐसी किसी की न होगी। क्योंकि उसने रासमण्डल की कथा लिखी। उसमें ऐसी ऐसी बात लिखी जिस्से यथावत् श्रीकृष्ण की निन्दा होय[2]...। इनमें विचारना चाहिए कि श्रीकृष्ण धर्मात्मा थे, ऐसा काम कभी नहीं करेंगे। और श्रीकृष्ण ऐसा कर्त्ता, तो कुम्भीपाक से कभी न निकलते। इस्से श्रीकृष्ण ने कभी ऐसा काम नहीं किया। क्योंकि वे बड़े धर्मात्मा थे। (पृष्ठ ३७०-३७१)

सत्यार्थ प्रकाश द्वि० सं०—देखो श्रीकृष्णजी का इतिहास महाभारत में अत्युत्तम है। उनका गुण कर्म स्वभाव और चरित्र आप्त पुरुषों के सदृश

---

१. द्र० भाग० १।३।२० में व्यास को नारायण का १७वां अवतार कहा है।

२. आगे भागवत में वर्णित रासलीला का संक्षेप से वर्णन किया है।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

है। जिसमें कोई अधर्म का आचरण श्रीकृष्णजी ने जन्म से मरण-पर्यन्त बुरा काम कुछ भी किया हो, ऐसा नहीं लिखा[1]। और इस भागवत वाले ने अनुचित मनमाने दोष लगाये हैं। दूध दही मक्खन की चोरी लगाई। कुब्जा दासी से समागम, परस्त्रियों से रासमण्डल में क्रीड़ा आदि मिथ्या दोष श्रीकृष्ण जी में लगाये। (पृष्ठ ३३६)

६. भागवत-खण्डन नृसिंह ने प्रह्लाद को वर दिया—तेरे २१ इक्कीस पितादि मोक्ष को प्राप्त हों। फिर कहा प्रमादी ने—वे [हिरण्याक्ष-हिरण्यकश्यप] हो रावण और कुम्भकर्ण हुए, और पुनः वे ही शिशुपाल और दन्तवक्र हुए। वह परस्पर विरुद्ध ही है (पृष्ठ १४-१५)

सत्यार्थ-प्रकाश प्र० सं०—प्रह्लाद ने कहा कि मेरे पिता का मोक्ष होय। तब नृसिंह बोले कि मेरे वर से २१ पुरुषों का मोक्ष हो गया तेरे पितादिकों का ···। फिर उसने लिखा कि हिरण्याक्ष हिरण्यकश्यप ही रावण कुम्भकर्ण, शिशुपाल और दन्तवक्र होते भये। फिर सद्गति किन की भई? यह बड़ी मिथ्या बात है। (पृष्ठ ३६७)

सत्यार्थ-प्रकाश द्वि० सं०—नृसिंह ने [प्रह्लाद को] वर दिया तेरे इक्कीस पुरुष सद्गति को गये।···और फिर वे ही हिरण्याक्ष हिरण्यकश्यप ही रावण कुम्भकर्ण, पुनः शिशुपाल दन्तवक्र उत्पन्न हुए, तो नृसिंह का वर कहां उड़ गया? ऐसी प्रमाद की बातें प्रमादी करते सुनते और मानते हैं, विद्वान् नहीं। (पृष्ठ ३३३-३३४)

७. भागवतखण्डन—भवान् कल्प०—'आप कल्प=सृष्टि और विकल्प =प्रलय में कभी मोह को प्राप्त नहीं होते, ऐसा ब्रह्मा को वर दिया

---

१. महाभारत में श्रीकृष्ण का चरित्र विभिन्न स्थानों पर बिखरा हुआ है। पुनरपि ऋषि दयानन्द के उक्त कथन की सत्यता जांचने के लिए हम सभापर्व के शिशुपालवध प्रकरण में अ० ३८ के श्लोक ६--२२ तक भीष्म द्वारा वर्णित कृष्ण-चरित्र, तथा अ० ४१ में शिशुपाल द्वारा कथित कृष्णदोष वर्णन की ओर पाठकों का ध्यान आकृष्ट करते हैं। यदि कृष्ण ने अपने जीवन में कुछ भी बुरा कार्य किया होता (जैसे कि भागवत में बताए हैं), तो शिशुपाल उन्हें गिनाने से कभी न चूकता। परन्तु वह कृष्ण के किसी दुराचरण का निर्देश न कर सका। इससे स्पष्ट है कि श्री कृष्ण का चरित स्फटिक के समान निर्मल था।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

नारायण ने। पुनः कहा—'ब्रह्मा ने मोहित होकर बछड़ों का हरण किया है'। यह विरुद्ध ही है। (पृष्ठ १५)

सत्यार्थ-प्रकाश प्र० सं०—ब्रह्माजी को नारायण जी ने वर दिया कि—

भवान् कल्पविकल्पेषु न विमुह्यति कर्हिचित्।

जब तक सृष्टि है उसका नाम कल्प और जब तक प्रलय बना रहे उस का नाम विकल्प। तो नारायण जी ने ब्रह्माजी से कहा कि तुमको कभी मोह न होगा। फिर वत्सहरण कथा में लिखा कि ब्रह्मा मोहित हो गये बछड़े को हर लिया। और उनी ब्रह्मा ने तो कहा था कि आप वसुदेव और देवकी के घर में जन्म लीजिए। फिर कैसी गाढ़ी भांग पी लिए कि झट भूल गए कि गोप है वा विष्णु का अवतार है। और भागवत बनाने वाले ने ऐसा नशा किया कि बड़ा अन्धकार इसके हृदय में है कि ऐसा बड़ा पूर्वापर विरुद्ध लिखता है। (पृष्ठ ३६९-३७०)

सत्यार्थ-प्रकाश द्वि० सं०—ब्रह्माजी को वर दिया था कि—

भवान् कल्पविकल्पेषु न विमुह्यति कर्हिचित्। भाग० स्कं० २। अ० ९। श्लोक ३६ ॥

आप कल्प=सृष्टि और विकल्प—प्रलय में भी मोह को कभी न प्राप्त होंगे। ऐसा लिखकर पुनः दशम स्कन्ध में 'मोहित होके वत्सहरण किया'। इन दोनों में से एक बात सच्ची और दूसरी झूठी होकर दोनों झूठी। (पृष्ठ ३३२)

८. **भागवतखण्डन**—यह हमने स्थालीपुलाक न्याय से लिखा है। इस लिए आप लोगों को जानना चाहिए कि सारा भागवत ही अशुद्ध है। (पृष्ठ १८)

सत्यार्थ-प्रकाश प्र० सं०—ऐसी ऐसी बातें लोगों ने मिथ्या बना लई हैं। और भागवत के विषय में हमने थोड़े से दोष देखायें हैं, परन्तु भागवत सब दोष रूप ही है। (पृष्ठ ३७२)

———

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा

प्रकाशित वा प्रसारित प्रामाणिक ग्रन्थ

वेद-विषयक ग्रन्थ

१. **ऋग्वेदभाष्य**—(संस्कृत हिन्दी; ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सहित)—प्रतिभाग सहस्राधिक टिप्पणियां, १०-११ प्रकार के परिशिष्ट व सूचियां। प्रथम भाग ३५-००, द्वितीय भाग ३०-००, तृतीय भाग ३०-००।

२. **यजुर्वेदभाष्य-विवरण**—ऋषि दयानन्दकृत भाष्य पर पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु कृत विवरण। प्रथम भाग अप्राप्य है। द्वितीय भाग मूल्य २५-००

३. **तैत्तिरीय-संहिता**—मूलमात्र, मन्त्र-सूची-सहित। ४०-००

४. **अथर्ववेदभाष्य**—श्री पं० विश्वनाथ जी वेदोपाध्याय कृत। ११-१३ काण्ड ३०-००; १४-१७ काण्ड २४-००; १८-१९ वां काण्ड २०-००; बीसवां काण्ड २०-००।

५. **ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका**—पं० युधिष्ठिर मीमांसक द्वारा सम्पादित एवं शतशः टिप्पणियों से युक्त। अप्राप्य

६. **ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका-परिशिष्ट**—भूमिका पर किये गए आक्षेपों के ग्रन्थकार द्वारा दिये गए उत्तर। मूल्य २-५०

७. **माध्यन्दिन (यजुर्वेद) पदपाठ**—शुद्ध संस्करण। २५-००

८. **गोपथ ब्राह्मण (मूल)**—सम्पादक श्री डा० विजयपाल जी विद्यावारिधि। अब तक प्रकाशित सभी संस्करणों से अधिक शुद्ध और सुन्दर संस्करण। मूल्य ४०-००

९ **वैदिक-सिद्धान्त-मीमांसा**—युधिष्ठिर मीमांसक लिखित वेदविषयक १७ विशिष्ट निबन्धों का अपूर्व संग्रह। मूल्य ३०-००

१०. **ऋग्वेदानुक्रमणी**—वेङ्कट माधवकृत। इस ग्रन्थ में स्वर छन्द आदि आठ वैदिक विषयों पर गम्भीर विचार किया है। व्याख्याकार—श्री डा० विजयपाल जी विद्यावारिधि। उत्तम-संस्करण ३०-००, साधारण २०-००

११. **ऋग्वेद की ऋक्संख्या**—युधिष्ठिर मीमांसक मूल्य २-००

१२. **वेदसंज्ञा-मीमांसा**—युधिष्ठिर मीमांसक १-००

१३. **वैदिक-छन्दोमीमांसा**—युधिष्ठिर मीमांसक। नया संस्करण १५-००

१४. **वैदिक-स्वर-मीमांसा**—युधिष्ठिर मीमांसक अप्राप्य

१५. **वेदों का महत्त्व तथा उनके प्रचार के उपाय; वेदार्थ की विविध प्रक्रियाओं की ऐतिहासिक मीमांसा** (संस्कृत-हिन्दी) यु० मी० ५-००

१६. **वेदापि और शन्तनु के आख्यान का वास्तविक स्वरूप**—लेखक—श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु। मूल्य १-००

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

१७. वेद और निरुक्त—श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु। मूल्य २-००

१८. निरुक्तकार और वेद में इतिहास—;, ,, १-००

१९. त्वाष्ट्री सरण्यू की वैदिक कथा का वास्तविक स्वरूप—लेखक—श्री पं० धर्मदेव जी निरुक्ताचार्य। १-००

२०. वेद में आर्य-दास-युद्ध-सम्बन्धी पाश्चात्य मत का खण्डन—लेखक श्री वैद्य रामगोपाल जी शास्त्री। अप्राप्य

२१. शिवशङ्करीय-लघुग्रन्थ पञ्चक—इसमें श्री पं० शिवशङ्कर जी काव्यतीर्थ लिखित वेदविषयक चतुर्दश-भुवन, वसिष्ठ-नन्दिनी, वैदिक-विज्ञान, वैदिक-सिद्धान्त और ईश्वरीय पुस्तक कौन? नाम के पांच विशिष्ट निबन्ध हैं ५-००

२२. यजुर्वेद का स्वाध्याय तथा पशुयज्ञ समीक्षा—लेखक पं० विश्वनाथ जी वेदोपाध्याय। बढ़िया जिल्द २०-००, साधारण १६-००।

२३. वैदिक-पीयूष-धारा—लेखक श्री देवेन्द्रकुमार जी कपूर। चुने हुए ५० मन्त्रों की प्रतिमन्त्र पदार्थ पूर्वक विस्तृत व्याख्या, अन्त में भावपूर्ण गीतों से युक्त। उत्तम जिल्द १५-००; साधारण १०-००।

२४. उरु-ज्योति—डा० श्री वासुदेवशरण अग्रवाल लिखित वेदविषयक स्वाध्याय योग्य निबन्धों का संग्रह। सुन्दर छपाई पक्की जिल्द १६-००

२५. वेदों की प्रामाणिकता—डा० श्रीनिवास शास्त्री। १-५०

२६. ANTHOLOGY OF VEDIC HYMNS –Sawami Bhomananda Sarasvati. अप्राप्य

कर्मकाण्ड-विषयक ग्रन्थ

२७. बौधायन-श्रौत-सूत्रम् (दर्शपूर्णमास प्रकरण)—भवस्वामी तथा सायण कृत भाष्यसहित (संस्कृत) ४०-००

२८. दर्शपूर्णमास-पद्धति—पं० भीमसेन कृत, भाषार्थ सहित २५-००

२९. कात्यायनगृह्यसूत्रम्—(मूलमात्र) अनेक हस्तलेखों के आधार पर हमने इसे प्रथम बार छपा है। मूल्य २०-००

३०. संस्कार-विधि—शताब्दी संस्करण, ४६० पृष्ठ, सहस्राधिक टिप्पणियां, १२ परिशिष्ट। मूल्य लागतमात्र १२-००, राज-संस्करण १५-००। सस्ता संस्करण मूल्य ५-२५, अच्छा कागज सजिल्द ७-५०।

३१. अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त श्रौत यज्ञों का संक्षिप्त परिचय (प्रथम भाग)—इस याग में अग्न्याधान, अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास, सुपर्णचिति सहित सोमयाग चातुर्मास्य और वाजपेय याग का वर्णन है। प्रथम भाग अप्राप्य। दूसरा भाग ४-००।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

३२. संस्कारविधि-मण्डनम्—संस्कार-विधि की व्याख्या। लेखक—वैद्य श्री रामगोपाल जी शास्त्री। अप्राप्य

३३. वैदिक-नित्यकर्म-विधि—सन्ध्यादि पांचों महायज्ञ तथा बृहद् हवन के मन्त्रों की पदार्थ तथा भावार्थ व्याख्या सहित। यु०मी० ३-०० सजिल्द ४-००

३४. वैदिक-नित्यकर्म-विधि—(मूलमात्र) सन्ध्या तथा स्वस्तिवाचनादि बृहद् हवन के मन्त्रों सहित। मूल्य ०-७५

३५. पञ्चमहायज्ञ-प्रदीप—श्री पं० मदनमोहन विद्यासागर ३-००

३६. हवनमन्त्र—स्वस्तिवाचनादि सहित। ०-५०

३७. सन्ध्योपासनविधि—भाषार्थ सहित। अप्राप्य

३८. सन्ध्योपासनविधि—भाषार्थ तथा दैनिक यज्ञ सहित। ०-५०

शिक्षा-निरुक्त-व्याकरण-विषयक ग्रन्थ

३९. वर्णोच्चारण-शिक्षा—ऋषि दयानन्द कृत हिन्दी व्याख्या ०-६०

४०. शिक्षासूत्राणि—आपिशल-पाणिनीय-चान्द्र शिक्षा-सूत्र। मूल्य६-००; सजिल्द ८-००

४१. शिक्षाशास्त्रम्—(संस्कृत) जगदीशाचार्य। ५-००

४२. अरबी-शिक्षाशास्त्रम्—„ „ ५-००

४३. निरुक्त-भाष्य—श्री पं० भगवद्दत्त कृत नैरुक्त=आधिदैविक प्रक्रियानुसारी तथा पाश्चात्य मत खण्डन सहित। अप्राप्य

४४. निरुक्त-श्लोकवार्त्तिकम्—केरलदेशीय नीलकण्ठ गार्ग्य विरचित। एक मात्र मलयालम लिपि में ताडपत्र पर लिखित दुर्लभ प्रति के आधार पर मुद्रित। आरम्भ में उपोद्घात रूप में निरुक्त-शास्त्र विषयक संक्षिप्त ऐतिह्य दिया गया है (संस्कृत)। सम्पादक—डा० विजयपाल विद्यावारिधिः। उत्तम कागज, शुद्ध छपाई तथा सुन्दर जिल्द सहित। १००-००

४५. निरुक्त-समुच्चय—आचार्य वररुचि विरचित (संस्कृत)। सं०—युधिष्ठिर मीमांसक। मूल्य १५-००

४६. अष्टाध्यायी—(मूल) शुद्ध संस्करण। मूल्य ३-००

४७. अष्टाध्यायी-परिशिष्ट—सूत्रों के पाठ-भेद तथा सूत्र-सूची। ५-००

४८. अष्टाध्यायी-भाष्य—(संस्कृत तथा हिन्दी) श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु कृत। प्रथम भाग २४-००, द्वितीय भाग २०-००, तृतीय भाग २०-००।

४९. धातुपाठ—धात्वादिसूची सहित, सुन्दर शुद्ध संस्करण। ३-००

५०. वामनीयं लिङ्गानुशासनम्—स्वोपज्ञ व्याख्यासहितम्। ८-००

५१. संस्कृत पठन-पाठन की अनुभूत सरलतम विधि—लेखक—श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु। प्रथम भाग १०-००, द्वितीय भाग (यु० मी०) १०-००।

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

५२. The Tested Easiest Method of Learning and Teaching Sanskrit (First Book)—यह पुस्तक श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु कृत 'विना रटे संस्कृत पठन-पाठन की अनुभूत सरलतम विधि' भाग १ का अंग्रेजी अनुवाद है। अंग्रेजी भाषा के माध्यम से पाणिनीय व्याकरण में प्रवेश करने वालों के लिये यह आधिकारिक पुस्तक है। कागज और छपाई सुन्दर, सजिल्द २५-००।

५३. महाभाष्य—हिन्दी व्याख्या (द्वितीय अध्याय पर्यन्त) पं० यु०मी०। प्रथम भाग ५०-००, द्वितीय भाग २५-००, तृतीय भाग २५-००।

५४. उणादिकोष—ऋ० द० स० कृत व्याख्या, तथा पं० यु० मी० कृत टिप्पणियों, एवं ११ सूचियों सहित। अजिल्द १०-००, सजिल्द १२-००

५५. दैवम् पुरुषकारवार्त्तिकोपेतम्—लीलाशुकमुनि कृत १०-००

५६. लिट् और लुङ् लकार की रूप-बोधक सरलविधि— ३-००

५७. भागवृत्तिसंकलनम्—अष्टाध्यायी की प्राचीन वृत्ति ६-००

५८. काशकृत्स्न-धातु-व्याख्यानम्—संस्कृत रूपान्तर। यु०मी० १५-००

५९. काशकृत्स्न-व्याकरणम्—संपादक यु० मी०। ६-००

६०. शब्दरूपावली—विना रटे शब्द रूपों का ज्ञान कराने वाली २-००

६१. संस्कृत-धातुकोश—पाणिनीय धातुओं का हिन्दी में अर्थ निर्देश। सं० युधिष्ठिर मीमांसक। मूल्य १०-००

६२. वाक्यपदीयम्—भर्तृहरिकृत स्वोपज्ञ व्याख्या तथा वृषभदेव कृत संक्षिप्त विवरण सहित। सम्पादक—श्री पं० चारुदेव शास्त्री एम० ए०। प्रथम भाग-ब्रह्मकाण्ड अप्राप्य। द्वितीय भाग—स्वोपज्ञ व्याख्या तथा पुण्यराज कृत व्याख्या सहित। संपादक श्री पं० चारुदेव शास्त्री। अप्राप्य

६३. अष्टाध्यायीशुक्लयजुःप्रातिशाख्ययोर्मतविमर्शः—डा० विजयपाल विरचित पीएच० डी० का महत्त्वपूर्ण शोध-प्रबन्ध (संस्कृत)। सुन्दर छपाई उत्तम कागज बढ़िया जिल्द सहित। मूल्य ५०-००

अध्यात्म विषयक ग्रन्थ

६४. ईश-केन-कठ-उपनिषद्—श्री वैद्य रामगोपाल शास्त्री कृत हिन्दी अंग्रेजी व्याख्या सहित। मूल्य—ईशो० १-५०; केनो० १-५०; कठो० ३-५०

६५. ध्यानयोग-प्रकाश—स्वामी दयानन्द सरस्वती के योग-विद्या के शिष्य स्वामी लक्ष्मणानन्द कृत। बढ़िया पक्की जिल्द, मूल्य १६-००

६६. अनासक्तियोग—लेखक पं० जगन्नाथ पथिक। १५-००

६७. आर्याभिविनय (हिन्दी)—स्वामी दयानन्द। गुटका सजिल्द ४-००

६८. Aryabhivinaya—English translation and notes (स्वामी भूमानन्द) दोरङ्गी छपाई। अजिल्द ४-००, सजिल्द ६-००

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

६९. **वैदिक ईश्वरोपासना।** मूल्य १-००

७०. **विष्णुसहस्रनाम-स्तोत्रम् (सत्यभाष्य-सहितम्)**—पं० सत्यदेव वासिष्ठ कृत आध्यात्मिक वैदिक भाष्य (४ भाग)। प्रति भाग १५-००

७१. **श्रीमदभगवद्-गीता-भाष्यम्**—श्री पं० तुलसीराम स्वामी ६-००

७२. **हंसगीता**—महाभारत का एक आध्यात्मिक प्रसंग। अप्राप्य

७३. **अगम्य पन्थ के यात्री को आत्मदर्शन**—चंचल बहिन। ३-००

७४. **आत्मा की जीवन-गाथा**—श्री कर्मनारायण कपूर। अप्राप्य

७५. **मानवता की ओर**—श्री शान्तिस्वरूप कपूर के विविध विचारोत्तेजक सरल भाषा में लिखे गये लेखों का संग्रह। ४-००

नीतिशास्त्र-इतिहास-विषयक ग्रन्थ

७६. **वाल्मीकि रामायण**—श्री पं० अखिलानन्द जी कृत हिन्दी अनुवाद सहित। अप्राप्य। अरण्य-किष्किन्धा काण्ड १०-००, युद्ध काण्ड १०-५०।

७७. **शुक्रनीतिसार**—व्याख्याकार श्री स्वा० जगदीश्वरानन्द जी सरस्वती। विस्तृत विषय सूची तथा श्लोक-सूची सहित उत्तम कागज सुन्दर छपाई तथा जिल्द सहित। मूल्य ४५-००

७८. **विदुर-नीति**—युधिष्ठिर मीमांसक कृत प्रतिपद पदार्थ और व्याख्या सहित। बढ़िया कागज, पक्की सुन्दर जिल्द। मूल्य २५-००

७९. **सत्याग्रह-नीति-काव्य**—आ०स० सत्याग्रह १९३९ ई० में हैदराबाद जेल में पं० सत्यदेव वासिष्ठ द्वारा विरचित। हिन्दी व्याख्या सहित। ५-००

८०. **भारतीय प्राचीन राजनीति**—श्री पं० भगवद्दत्त जी। अप्राप्य।

८१. **संस्कृत व्याकरणशास्त्र का इतिहास**—युधिष्ठिर मीमांसक कृत। अप्राप्य। नया परिष्कृत परिवर्धित संस्करण छप रहा है।

८२. **संस्कृत व्याकरण में गणपाठ की परम्परा और आचार्य पाणिनि**—लेखक—डा० कपिलदेव शास्त्री एम० ए०। सजिल्द १५-००

८३. **ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन**—इस बार इस में ऋषि दयानन्द के अनेक नये उपलब्ध पत्र और विज्ञापन संगृहीत किये गए हैं। इस बार यह संग्रह चार भागों में छपा है। प्रथम दो भागों में ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन आदि संगृहीत हैं। तीसरे और चौथे भाग में विविध व्यक्तियों द्वारा ऋ० द० को भेजे गये पत्रों का संग्रह है। प्रथम भाग—३५-००; दूसरा भाग ३५-००, तीसरा भाग ३५-००, चौथा भाग ३५-००

८४. **विरजानन्द-चरित**—लेखक—पं० भीमसेन शास्त्री एम० ए०। नया परिवर्धित और शुद्ध संस्करण। मूल्य ३-००

८५. **ऋषि दयानन्द सरस्वती का स्वलिखित और स्वकथित आत्मचरित्र**—सम्पादक पं० भगवद्दत्त। मूल्य १-००

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

८६. **आर्यसमाज के वेद-सेवक विद्वान्**—लेखक—डा० भवानीलाल भारतीय । **अप्राप्य**

८७. **ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की संस्कृत-साहित्य को देन**—लेखक—डा० भवानीलाल भारतीय एम० ए० । सजिल्द १५-००

दर्शन-आयुर्वेद-विषयक ग्रन्थ

८८. **मीमांसा-शाबर-भाष्य**—आर्षमतविमर्शिनी हिन्दी व्याख्या सहित । व्याख्याकार—युधिष्ठिर मीमांसक । प्रथम भाग ४०-००; द्वितीय भाग ३०-००; राज संस्करण ४०-००; तृतीय भाग ५०-००; चौथा भाग यन्त्रस्थ, शीघ्र प्रकाशित होगा ।

८९. **नाडी-तत्त्वदर्शनम्**—श्री पं० सत्यदेव जी वासिष्ठ । मूल्य ३०-००

९०. **षट्कर्मशास्त्रम्**—(संस्कृत) जगदीशाचार्य । अजिल्द ८-००

९१. **परमाणु-दर्शनम्**—(संस्कृत) जगदीशाचार्य । अजिल्द ८-००

प्रकीर्ण-ग्रन्थ

९२. **सत्यार्थप्रकाश**—(आर्यसमाज-शताब्दी-संस्करण)—१३ परिशिष्ट ३५०० टिप्पणियां, तथा सन् १८७५ के प्रथम संस्करण के विशिष्ट उद्धरणों सहित । राजसंस्करण मूल्य ३५-००, साधारण संस्करण ३०-०० । सस्ता संस्करण २०×३० सोलह पेजी । **अप्राप्य**

९३. **दयानन्दीय लघुग्रन्थ-संग्रह**—१४ ग्रन्थ, सटिप्पण, अनेक परिशिष्टों के सहित । लागतमात्र २५-००

९४. **भागवत-खण्डनम्**—ऋ० द० की प्रथम कृति । अनु० युधिष्ठिर मीमांसक । ३-००

९५. **संस्कृतवाक्यप्रबोध**—ऋ०द० कृत । संस्कृत वाक्यप्रबोध पर पौराणिक पण्डित अम्बिकादत्त व्यास के किये गये आक्षेपों, के पं० युधिष्ठिर मीमांसक द्वारा लिखित उत्तर के सहित । **अप्राप्य**

९६. **संस्कृत-वाक्यप्रबोध**—हिन्दी अंग्रेजी अनुवाद तथा आक्षेपों के उत्तर सहित । **अप्राप्य**

९७. **ऋषि दयानन्द के शास्त्रार्थ और प्रवचन**—इस में पौराणिक विद्वानों तथा ईसाई मुसलमानों के साथ ऋषि दयानन्द के अत्यन्त प्रामाणिक एवं महत्त्वपूर्ण शास्त्रार्थ दिये गये हैं । अनन्तर पूना में सन् १८७५ तथा बम्बई में सन् १८८२ में दिए गये व्याख्यानों का संग्रह है । इसी से पूर्व के छपे पूना के व्याख्यान जो पूना-प्रवचन और उपदेश-मञ्जरी के नाम से हिन्दी में उपलब्ध होते हैं, उन का पाठ प्रमाणिक नहीं है । उस में अनुवादकों ने मनमाना घटाया-बढ़ाया है । हमने सन् १८७५ में व्याख्यान काल

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

में छपे हुए मूल मराठी भाषा में प्रकाशित टुकड़ों के अनुसार नया प्रामाणिक अनुवाद दिया है। बम्बई के २४ प्रवचनों का सारांश तो इसमें प्रथम बार प्रकाशित हुआ है। साथ में ८-१० विशिष्ट परिशिष्ट दिये हैं। सुन्दर सुदृढ़ कागज, पूरे कपड़े की सुन्दर जिल्द, मूल्य लागत-मात्र ३०-००

यही संस्करण दो भागों में **दयानन्द शास्त्रार्थ-संग्रह** और **दयानन्द प्रवचन-संग्रह** के रूप में अलग अलग पूर्ववत् सजिल्द भी प्राप्त हो सकते हैं।

मूल्य प्रत्येक का १८-००

९९. **दयानन्द-शास्त्रार्थ-संग्रह**—संख्या ९८ के ग्रन्थ से पृथक् स्वतन्त्र रूप से छपा हैं। सं० डा० भवानीलाल भारतीय। सस्ता संस्करण १०-००

१०० **दयानन्द-प्रवचन-संग्रह**—(पूना-बम्बई-प्रवचन)। पूर्ववत् स्वतन्त्र रूप में छपा है। अनुवादक और सम्पा० पं० युधिष्ठिर मीमांसक। सस्ता संस्करण १०-००

१०१ **ऋषि दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों का इतिहास**—लेखक-युधिष्ठिर मीमांसक। नया परिशोधित परिवर्धित संस्करण। मूल्य ४०-००

२०२ **ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज से सम्बद्ध कतिपय महत्त्वपूर्ण अभिलेख**—इसमें ऋ० द० के नये उपलब्ध पत्र, बम्बई आर्यसमाज के आदिम २८ नियमों की ऋ० द० कृत व्याख्या पं० गोपालराव हरि देशमुख लिखित दयानन्दचरित्र मराठी का हिन्दी रूपान्तर, आर्यसमाज काकड़वाड़ी बम्बई की पुरानी गुजराती में लिखित कार्यवाही (सन् १८८२ में जब ऋ० द० बम्बई में थे) का हिन्दी रूपान्तर आदि। मूल्य ८-००

१०३ **पञ्चमहायज्ञविधि**—ऋषि दयानन्द कृत **अप्राप्य**

१०४ **व्यवहारभानु**—ऋषि दयानन्द कृत। १-००

१०५ **आर्योद्देश्यरत्नमाला**—ऋषि दयानन्द कृत। ०-५०

१०६ **अष्टोत्तरशतनाममालिका**—सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास की सुन्दर प्रामाणिक विस्तृत व्याख्या। लेखक पं० विद्यासागर शास्त्री। ६-००

१०७. **कन्योपनयन-विधि**-अर्थात् 'कन्योपनयन-प्रतिषेध' ग्रंथ का खण्डन। श्री पं० महाराणीशंकर। अपने विषय की सुन्दर सामायिक पुस्तक।

मूल्य ४-००; सजिल्द ६-००

१०८. **जगद् गुरु दयानन्द का संसार पर जादू**—श्री मेहत्ता जैमिनि बी० ए० (स्व० विज्ञानानन्द सरस्वती)। ५८ वर्ष पश्चात् यह उपयोगी पुस्तक पुनः छापी गई है। मूल्य १-००

१०९ **प्यारा ऋषि**—श्री आनन्द स्वामी। ऋषि के जीवन की प्रेरणापद घटनाएं। **अप्राप्य**

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

११० आर्य-मन्तव्य-प्रकाश—महामहोपाध्याय पं० आर्यमुनि। प्रथम भाग ५-०० द्वितीय भाग ५-००।

१११ आर्यसमाज के दिग्गज विद्वानों का शास्त्रार्थ—यह शास्त्रार्थ 'वेद में इतिहास हैं वा नहीं' विषय पर लाहौर में सन् १९३३ में म० हंसराज जी के सभापतित्व में हुआ था। अप्राप्य

११२ Vegetarianism V/s Meet: Eating—कर्मनारायण कपूर मूल्य ०-५०

११३ अमीर सुधा—भक्त अमीचन्द कृत। मूल्य १-००

शीघ्र प्रकाशित होने वाले ग्रन्थ

१—मीमांसा-शाबरभाष्य—व्याख्या—चतुर्थ भाग छप रहा है।

२—वेदोक्त-संस्कार-प्रकाश—मूल (मराठी) लेखक श्री पं० विट्ठल गांवस्कर। हिन्दी अनुवादक श्री जगदेवसिंह जी आर्य, बम्बई। यह ऋ० द० कृत संस्कार-विधि का प्रमुख सहायक ग्रन्थ था। छप रहा है।

३. संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास—नया परिवर्धित एवं परिशोधित संस्करण। छप रहा है।

४. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका—ऋषि दयानन्द कृत।

५—कात्यायनीय ऋक्सर्वानुक्रमणी—षड्गुरुशिष्य कृत वृत्ति सहित। प्रथम वार वृत्ति का पूरा पाठ छप रहा है। प्रो० मेकडानल्ड ने लगभग ९० वर्ष पूर्व वृत्ति का संक्षेप छापा था। वह भी सम्प्रति दुर्लभ हो गया है। सम्पादक डा० श्री विजयपाल जी। (सम्पादनाधीन)

पुस्तक प्राप्ति स्थान

रामलाल कपूर ट्रस्ट

बहालगढ़, जिला सोनीपत (हरयाणा) १३१०२१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.

Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan Kosha

कतिपय दुर्लभ ग्र

नीचे लिखी पुस्तकों की २०-२५ प्रतियां ही

१—पाणिनि के समय विद्यमान संस्कृत व
मीमांसक

२—ऋषि दयानन्द की पदप्रयोगशैली—ले
इस में ऋषि दयानन्द के यजुर्वेदभाष्य में प्रयुक्त
आधुनिक वैयाकरण अशुद्ध मानते हैं, उन पर पा
से विचार किया है।

३—वेदार्थ प्रक्रिया के मूलभूत सिद्धान्त—लेखक श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु।
मूल्य ०-५०

४—सौ वर्ष जीने के साधन 'नित्यकर्म'—लेखक श्री देवमुनि वानप्रस्थ (लालचन्द चोपड़ा)
मूल्य २-००; सजिल्द ३-००

दयानन्द अङ्क (वेदवाणी का विशेषाङ्क)—इसमें ऋ० द० के जीवन से सम्बद्ध अभी तक अज्ञात और प्रकाशित विशिष्ट घटनाओं तथा ऋ० द० की यात्रा का विवरण तिथि संवत्, तारीख, वार, सन् सहित। १०-००

वेदवाणी (मासिक) पत्रिका

३५ वर्षों से विना नागा नियत समय पर प्रकाशित होने वाली वेदादि विशिष्ट विषयों की एक मात्र मासिक पत्रिका। प्रति वर्ष एक बड़ा विशेषाङ्क दिया जाता है। मूल्य १२ रु० वार्षिक। विदेश के लिये २५ रु० वार्षिक।

पुस्तक प्राप्ति स्थान

रामलाल कपूर ट्रस्ट

बहालगढ़, जिला—सोनीपत (हरयाणा) १३१०२१

CC-0.Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection.